

क्षितिज

[काव्य खंड]

कविता 1 : सूरदास

1. सूरदास के पदों के आधार पर यह पता चलता है उद्धव को स्वयं के निर्गुण ज्ञान पर बहुत अधिक अभिमान था। सूरदास ने अपने पद के माध्यम से व्यंग्य भी किया है वे श्री कृष्ण के सानिध्य में रहते हुए भी वे श्री कृष्ण के प्रेम से सर्वथा मुक्त रहे। श्री कृष्ण के प्रति कैसे उनके हृदय में अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ? अर्थात् श्री कृष्ण के साथ कोई व्यक्ति एक क्षण भी व्यतीत कर ले तो वह कृष्णमय हो जाता है। वे अपने ज्ञान दर्प में ही रहे।
अपने ज्ञान के अभिमान में वह गोपियों के श्री कृष्ण के प्रति आदर्श और पवित्र प्रेम को नहीं समझ पाए। वह गोपियों को निर्गुण ज्ञान पर चलने के उपदेश देते रहे, जबकि गोपियाँ श्रीकृष्ण के प्रति पवित्र प्रेम में डूबी हुई थीं।
2. गोपियों द्वारा उद्धव को भाग्यवान कहने में यह व्यंग्य निहित है कि उद्धव वास्तव में भाग्यवान न होकर अति भाग्यहीन हैं। वे श्री कृष्ण के सानिध्य में रहते हुए भी वे श्री कृष्ण के प्रेम से सर्वथा मुक्त रहे। श्री कृष्ण के प्रति कैसे उनके हृदय में अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ? अर्थात् श्री कृष्ण के साथ कोई व्यक्ति एक क्षण भी व्यतीत कर ले तो वह कृष्णमय हो जाता है। वे प्रेम बंधन में बँधने एवं मन के प्रेम में अनुरक्त होने की सुखद अनुभूति से पूर्णतया अपरिचित हैं।

3. गोपियों ने उद्धव के व्यवहार की तुलना निम्नलिखित उदाहरणों से की हैं-

- गोपियों ने उद्धव के व्यवहार की तुलना कमल के पते से की हैं जो नदी के जल में रहते हुए भी जल की ऊपरी सतह पर ही रहता है। अर्थात् जल में रहते हुए भी जल का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता। उसी प्रकार श्रीकृष्ण का सान्निध्य पाकर भी उनका प्रभाव उद्धव पर नहीं पड़ा।
- उद्धव जल के मध्य रखे तेल के गागर (मटके) की भाँति हैं, जिस पर जल की एक बूँद भी टिक नहीं पाती। इसलिए उद्धव श्रीकृष्ण के समीप रहते हुए भी उनके रूप के आकर्षण तथा प्रेम-बंधन से सर्वथा मुक्त हैं।
- उद्धव ने गोपियों को जो योग का उपदेश दिया था, उसके बारे में उनका यह कहना है कि यह योग सुनते ही कड़वी ककड़ी के सामान प्रतीत होता है। इसे निगला नहीं जा सकता। यह अत्यंत अरुचिकर है।

4. गोपियाँ कृष्ण के आगमन की आशा में दिन गिनती जा रही थीं। वे अपने तन-मन की व्यथा को चुपचाप सहती हुई कृष्ण के प्रेम रस में डूबी हुई थीं। वे इसी इंतजार में बैठी थीं कि श्री कृष्ण उनके विरह को समझेंगे, उनके प्रेम को समझेंगे और उनके अतृप्त मन को अपने दर्शन से तृप्त करेंगे। परन्तु यहाँ सब उल्टा होता है। कृष्ण को न तो उनकी पीड़ा का ज्ञान है और न ही उनके विरह के दुःख का। कृष्ण ने योग का संदेश देने के लिए उद्धव को भेज दिया। विरह की अग्नि में जलती हुई गोपियों को जब उद्धव ने कृष्ण को भूल जाने और योग-साधना करने का उपदेश देना प्रारम्भ किया, तब उनके हृदय में जल रही विरहाग्नि में घी का काम कर उसे और प्रज्वलित कर दिया।

5. गोपियाँ श्री कृष्ण के प्रेम में रात-दिन, सोते-जागते सिर्फ़ श्रीकृष्ण का नाम ही रटती रहती हैं। कृष्ण के प्रति अपने अनन्य प्रेम को गोपियों ने चींटियों और हारिल की लकड़ी के उदाहरणों द्वारा व्यक्त किया है। उन्होंने स्वयं की तुलना

चींटियों से और श्रीकृष्ण की तुलना गुड़ से की है। उनके अनुसार श्री कृष्ण उस गुड़ की भाँति हैं जिस पर चींटियाँ चिपकी रहती हैं। हारिल एक ऐसा पक्षी है जो सदैव अपने पंजे में कोई लकड़ी या तिनका पकड़े रहता है। वह उसे किसी भी दशा में नहीं छोड़ता। उसी तरह गोपियों ने मन, वचन और कर्म से श्री कृष्ण की प्रेम रूपी लकड़ी को दृढ़तापूर्वक पकड़ लिया है।

6. 'तेल की गागर' के दृष्टांत के माध्यम से कवि निर्लिसता का भाव प्रकट करना चाहता है। जिस प्रकार तेल की गागर जल में रहकर भी जल से निर्लिस रहती है ठीक उसी प्रकार उद्धव भी जल के मध्य रखे तेल के गागर (मटके) की भाँति हैं, जिस पर जल की एक बूँद भी टिक नहीं पाती। अर्थात् उद्धव श्रीकृष्ण के समीप रहते हुए भी उनके रूप के आकर्षण तथा प्रेम-बंधन से सर्वथा मुक्त हैं। वे कृष्ण के सानिध्य में रहते हुए भी वे श्री कृष्ण के प्रेम से सर्वथा मुक्त रहे। श्री कृष्ण के प्रति कैसे उनके हृदय में अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ? वे प्रेम बंधन में बँधने एवं मन के प्रेम में अनुरक्त होने की सुखद अनुभूति से पूर्णतया अपरिचित रहे।

7. गोपियों को लगता है कि कृष्ण द्वारका जाकर राजनीति के विद्वान हो गए हैं। अब कृष्ण राजा बनकर चाले चलने लगे हैं। छल-कपट उनके स्वभाव के अंग बन गया है। गोपियों ने ऐसा इसलिए कहा है क्योंकि कृष्ण ने सीधी सरल बातें ना करके रहस्यात्मक ढंग से उद्धव के माध्यम से अपनी बात गोपियों तक पहुँचाई है। गोपियों का यह कथन कि हरि अब राजनीति पढ़ आए हैं। कहीं न कहीं आज की भ्रष्ट राजनीति को परिभाषित कर रहा है। आज की राजनीति तो सिर से पैर तक छल-कपट से भरी हुई है। कृष्ण ने गोपियों को मिलने का वादा किया था और पूरा नहीं किया वैसे ही आज राजनीति में लोग कई वादे कर के भूल जाते हैं।

8. प्रस्तुत पंक्ति में गोपियों के योग के प्रति उनके मनोभावों को प्रकट किया है। गोपियाँ सोते-जागते, स्वप्न, दिवस-रात सदैव श्रीकृष्ण का ही स्मरण करती रहती हैं ऐसे में उद्धव द्वारा दिया योग संदेश उन्हें कड़वी ककड़ी के समान प्रतीत होता है।

गोपियों को योग व्यर्थ, कड़वी ककड़ी के समान लगता है, जिसे कोई खाना नहीं चाहता है। जिस प्रकार कड़वी ककड़ी को निगला नहीं जा सकता है। उसी प्रकार उद्धव की ज्ञानपूर्ण योग की बातें भी उनकी समझ से बाहर हैं। वो उन्हें स्वीकार नहीं कर पा रही हैं। योग ऐसा रोग है, जो न पहले कभी देखा है न सुना है।

9. सूरदास के भ्रमरगीत की विशेषताएँ निम्न हैं-

- 'भ्रमरगीत' एक भाव-प्रधान गीतिकाव्य है।
- इसमें उदात्त भावनाओं का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।
- सूरदास ने अपने भ्रमर गीत में निर्गुण ब्रह्म का खंडन किया है।
- 'भ्रमरगीत' में शुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है।
- भ्रमरगीत में उपालंभ की प्रधानता है।
- 'भ्रमरगीत' में सूरदास ने विरह के समस्त भावों की स्वाभाविक एवं मार्मिक व्यंजना की हैं।
- भ्रमरगीत में उद्धव व गोपियों के माध्यम से ज्ञान को प्रेम के आगे नतमस्तक होते हुए बताया गया है, ज्ञान के स्थान पर प्रेम को सर्वोपरि कहा गया है।
- सूरदास कवि होने के साथ-साथ सुप्रसिद्ध गायक भी थे। भ्रमरगीत में संगीतात्मकता का गुण विद्यमान है।

10. 'मरजादा न लही' के माध्यम से प्रेम की मर्यादा न रहने की बात की जा रही है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर वह शांत भाव से श्री कृष्ण के लौटने की प्रतीक्षा कर रही थीं। वह चुप्पी लगाए अपनी मर्यादाओं में लिपटी हुई इस वियोग को सहन कर रही थीं क्योंकि वे श्री कृष्ण से प्रेम करती हैं। कृष्ण ने योग का संदेश देने के लिए उद्धव को भेज दिया। गोपियों उनको उनकी मर्यादा छोड़कर बोलने पर मजबूर कर दिया है। प्रेम के बदले प्रेम का प्रतिदान ही प्रेम की मर्यादा है, लेकिन कृष्ण ने गोपियों के प्रेम रस के उत्तर में योग का संदेश भेज दिया। इस प्रकार कृष्ण ने प्रेम की मर्यादा नहीं रखी। वापस लौटने का वचन देकर भी वे गोपियों से मिलने नहीं आए।
11. गोपियाँ वाक्चतुर हैं। वे बात बनाने में किसी को भी परास्त कर दें। गोपियाँ उद्धव को अपने उपालंभ (तानों) के द्वारा चुप करा देती हैं। गोपियों में व्यंग्य करने की अद्भुत क्षमता है। वह अपने व्यंग्य बाणों द्वारा उद्धव को घायल कर देती हैं। वह अपनी तर्क क्षमता से बात-बात पर उद्धव को निरुत्तर कर देती हैं।

कविता 2 : राम-लक्ष्मण-परशुराम संवाद

1. परशुराम स्वभाव से बहुत अधिक क्रोधी थे साथ ही वह शिव-धनुष उन्हें बहुत अधिक प्यारा भी था इसलिए परशुराम का क्रोध शांत करने के लिए श्री राम ने उपर्युक्त कथन कहा होगा।
2. राम स्वभाव से कोमल और विनयी हैं। परशुराम जी क्रोधी स्वभाव के थे। परशुराम के क्रोध करने पर श्री राम ने धीरज से काम लिया। उन्होंने स्वयं को उनका दास कहकर परशुराम के क्रोध को शांत करने का प्रयास किया एवं उनसे अपने लिए आज्ञा करने का निवेदन किया।
- लक्ष्मण राम से एकदम विपरीत हैं। लक्ष्मण क्रोधी स्वभाव के हैं। उनकी

जबानछुरी से भी अधिक तेज हैं। लक्ष्मण परशुराम जी के साथ व्यंग्यपूर्ण वचनों का सहारा लेकर अपनी बात को उनके समक्ष प्रस्तुत करते हैं। तनिक भी इस बात की परवाह किए बिना कि परशुराम कहीं और क्रोधित न हो जाएँ। राम अगर छाया हैं। तो लक्ष्मण धूप हैं। राम विनम्र, मृदुभाषी, धैर्यवान, व बुद्धिमान व्यक्ति हैं वहीं दूसरी ओर लक्ष्मण निडर, साहसी तथा क्रोधी स्वभाव के हैं।

3. प्रसंग- प्रस्तुत पंक्तियाँ तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस से ली गई हैं। उक्त पंक्तियाँ में परशुराम जी द्वारा बोले गए वचनों को सुनकर विश्वामित्र मन ही मन परशुराम जी की बुद्धि और समझ पर तरस खाते हैं। भाव- विश्वामित्र ने परशुराम के वचन सुने। परशुराम ने बार-बार कहा कि मैं लक्ष्मण को पलभर में मार दूँगा। विश्वामित्र हृदय में मुस्कुराते हुए परशुराम की बुद्धि पर तरस खाते हुए मन ही मन कहते हैं कि गधि-पुत्र अर्थात् परशुराम जी को चारों ओर हरा ही हरा दिखाई दे रहा है। जिन्हें ये गन्ने की खाँड़ समझ रहे हैं वे तो लोहे से बनी तलवार (खड्ग) की भाँति हैं। इस समय परशुराम की स्थिति सावन के अंधे की भाँति हो गई है। जिन्हें चारों ओर हरा ही हरा दिखाई दे रहा है अर्थात् उनकी समझ अभी क्रोध व अहंकार के वश में है।
4. श्रीराम अपने से बड़ों का सदैव सम्मान करते हैं। श्रीराम अत्यंत विनयशील तथा संयमी हैं। परशुराम जी द्वारा कटु वचनों का प्रयोग करने के बाद भी वे बड़ी विनम्रता से उनको सुनते हैं। वे परशुराम जी का अत्यन्त सम्मान करते हैं तथा स्वयं को उनका दास कहते हैं।
5. परशुराम स्वभाव से क्रोधी एवं अहंकारी थे। यह स्वयंवर में क्रोध करने तथा अपनी वीरता का परिचय देते खुद को सहस्र बाहु तथा पृथ्वी को सात बार क्षत्रियों से रहित करने वाला कहने से पता चलता है।

6. यह सही कहा गया है कि साहस और शक्ति के साथ विनम्रता हो तो बेहतर है। एक विनम्र व्यक्ति ही संकट के समय में भी अपना आपा नहीं खोता है। जो विनम्र नहीं होते हैं वे मानसिक रूप से शीघ्र विचलित हो जाने के कारण अपना धैर्य खो बैठते हैं और गलतियाँ करने लगते हैं। इससे उनका नुकसान ही होता है। इस कविता में भी परशुराम और लक्ष्मण में साहस की कोई कमी नहीं होती। साहस के साथ दोनों में विनम्रता न होने के कारण धनुष तोड़ने वाली छोटी-सी बात भी गंभीर हो जाती है, दोनों के मध्य युद्ध जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है, परंतु राम विनम्रता पूर्वक बात को सँभाल लेते हैं अतः साहस के साथ विनम्रता होनी भी आवश्यक है।
7. 'असमय खांड न ऊखमय' से अभिप्राय परशुराम की वास्तविकता से अनभिज्ञता से है। यहाँ पर विश्वामित्र मन-ही-मन सोच रहे हैं कि परशुराम ने कितनी सरलता से यह कह तो दिया कि अपने फरसे से वे लक्ष्मण का वध कर देंगे। परंतु परशुराम जिस बालक को गन्ने की खांड समझ रहे हैं, वह तो वास्तव में लोहे से बना खांडा अर्थात् तलवार के समान है जिसे काट पाना इतना सरल नहीं है।
8. लक्ष्मण परशुराम से कहते हैं कि उनके पराक्रम के बारे में कौन नहीं जानता। उन्होंने अपने माता पिता के ऋण से तो मुक्ति पा ली है अब वे अपने गुरु के ऋण की बात कर रहे हैं। और लगता है जो मेरे ही मत्थे चढ़ा है। इतने दिन का ब्याज जो बढ़ा है (गुरु के ऋण का) वो भी आप मेरे ही मत्थे डालना चाहते हैं। बेहतर होगा कि आप कोई व्यावहारिक बात करें तो मैं थैली खोलकर आपके मूलधन और ब्याज दोनों की पूर्ति कर दूँगा। इस प्रकार लक्ष्मण ने व्यंग्यात्मक रूप से परशुराम को ऋण चुकाने का उपाय बताया।

9. लक्ष्मण 'कुम्हड़बतिया' और 'तरजनी' के उदहारण से अपनी पर्वत के सामान शक्तिशाली होने की बात सिद्ध करना चाहते हैं। लक्ष्मण कहते हैं कि वे कोई कद्दू के फूल के समान नहीं हैं कि परशुराम की तर्जनी की उँगली दिखाने से मुरझा जाए। वे शूरवीर और शक्तिशाली हैं अतः परशुराम व्यर्थ की डींगें मरकर उन्हें डराने-धमकाने का प्रयास न करें।
10. 'गाधिसूनु' यहाँ पर विश्वामित्र को कहा गया है। विश्वामित्र हृदय में मुस्कराते हुए परशुराम की बुद्धि पर तरस खाते हुए मन ही मन कहते हैं कि परशुराम जी को चारों ओर हरा ही हरा दिखाई दे रहा है। जिन्हें ये गन्ने की खाँड़ समझ रहे हैं वे तो लोहे से बनी तलवार (खड़ग) की भाँति हैं। इस समय परशुराम की स्थिति सावन के अंधे की भाँति हो गई है। जिन्हें चारों ओर हरा ही हरा दिखाई दे रहा है अर्थात् उनकी समझ अभी क्रोध व अहंकार के वश में है।
11. परशुराम के क्रोध का मूल कारण शिवधनुष का टूट जाना था। यह वह धनुष था जिसे उन्होंने राजा जनक को दिया था। परशुराम ने जब धनुष तोड़ने वाले का नाम जानना चाहा तो लक्ष्मण ने उनके क्रोध में घी डालने का कार्य करते हुए उन्हें कुछ बातें कह दी कि ऐसा क्या है इस धनुष में, हमने तो कितने ही धनुष तोड़े हैं। मेरे भाई श्रीराम ने तो सिर्फ इस धनुष की प्रत्यंचा ही चढ़ाई थी कि वह टूट गया। लक्ष्मण के मुँह से उक्त वचन शिव के धनुष के बारे सुनकर परशुराम और अधिक क्रोधित हो उठे।

कविता 3: उत्साह / अट नहीं रही है

1. 'उत्साह' कविता में बादल निम्नलिखित अर्थों की ओर संकेत करता है-
 - जल बरसाने वाली शक्ति है।
 - बादल पीड़ित-प्यासे जन की आकाँक्षा को पूरा करने वाला है।
 - बादल कवि में उत्साह और संघर्ष भर कविता में नया जीवन लाने में सक्रिय है।
2. कवि ने बादल से फुहार, रिमझिम या बरसने के लिए नहीं कहता बल्कि 'गरजने' के लिए कहा है; क्योंकि कवि बादलों को क्रांति का सूत्रधार मानता है। 'गरजना' विद्रोह का प्रतीक है। कवि बादलों से पौरुष दिखाने की कामना करता है। कवि ने बादल के गरजने के माध्यम से कविता में नूतन विद्रोह का आह्वान किया है।
3. फागुन बहुत मतवाला, मस्त और शोभाशाली है। फागुन के महीने में प्राकृतिक सौंदर्य अपने चरम पर होता है। उसका रूप सौंदर्य रंग-बिरंगें फूलों और हवाओं में प्रकट होता है। इसलिए आँखें फागुन की सुंदरता से मंत्रमुग्ध होकर हटाने से भी नहीं हटती।
4. प्रस्तुत कविता 'अट नहीं रही है' में कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी ने फागुन के सर्वव्यापक सौन्दर्य और मादक रूप के प्रभाव को दर्शाया है। फागुन के सौंदर्य को असीम दिखाया है। उसे हर जगह छलकता हुआ दिखाया है। घर-घर में फैला हुआ दिखाया है। यहाँ 'घर-घर भर देते हो' में फूलों की शोभा की ओर संकेत है और मन में उठी खुशी की ओर भी। 'उड़ने को नभ में पर-पर कर देते हो' भी ऐसा सांकेतिक प्रयोग है। यह पक्षियों की उड़ान पर भी लागू

होता है और मन की उमंग पर भी सौंदर्य से आँख न हटा पाना भी उसके विस्तार की झलक देता है।

5. 'उत्साह' कविता में नवजीवन वाले बादलों के लिए कहा गया है। कवि का बादलों को नवजीवन कहने का कारण यह है कि बादल न केवल तप्त पृथ्वी को शांत करते हैं बल्कि प्रकृति और जनमानस में नवजीवन और खुशियों का संचार भी करते हैं।
6. प्रस्तुत पंक्ति का आशय बादलों को शक्तिशाली, वज्र के समान कठोर और क्रांति उत्पन्न करने वाले से है। कवि इन बादलों के माध्यम से समाज और साहित्य के क्षेत्र में परिवर्तन लाना चाहता है।
7. फागुन की सुंदरता को देखकर कवि का मन अभिभूत है। फागुन माह में प्रकृति, नव-पल्लवों और पुष्पों से शोभायमान हो गई है। चारों तरफ की हरियाली भी अनुपम वातावरण का निर्माण कर रही है। कवि प्रकृति के इस अनुपम सौंदर्य से अपनी दृष्टि हटा पाने में असमर्थ है। वह इस सौंदर्य को निहारना चाहता है।
8. फागुन में सर्वत्र मादकता मादकता छाई रहती है। प्राकृतिक शोभा अपने पूर्ण यौवन पर होती है। पेड़-पौधें नए पत्तों, फल और फूलों से लद जाते हैं, हवा सुगन्धित हो उठती है। आकाश साफ-स्वच्छ होता है। पक्षियों के समूह आकाश में विहार करते दिखाई देते हैं। बाग-बगीचों और पक्षियों में उल्लास भर जाता है। इस तरह फागुन का सौंदर्य बाकी ऋतुओं से भिन्न है।
9. 'अट नहीं रही' कविता में फागुन ऋतू का वर्णन है। फागुन में प्रकृति अपने चरम सौंदर्य में होती है। फागुन में सर्वत्र मादकता मादकता छाई रहती है।

प्राकृतिक शोभा अपने पूर्ण यौवन पर होती है। पेड़-पौधें नए पत्तों, फल और फूलों से लद जाते हैं, हवा सुगन्धित हो उठती है। आकाश साफ-स्वच्छ होता है। पक्षियों के समूह आकाश में विहार करते दिखाई देते हैं। बाग-बगीचों और पक्षियों में उल्लास भर जाता है। और फागुन का यही सौंदर्य है जो कवि के अनुसार अटता नहीं है।

कविता 4: यह दंतुरित मुस्कान/फसल

1. दंतुरित का अर्थ है- बच्चे में पहली बार दाँत निकलना। बच्चों की दंतुरित मुसकान बड़ी मोहक होती है। बच्चे की दंतुरित मुसकान का कवि के मन पर अत्यंत गहरा प्रभाव पड़ता है। बाँस और बबूल जैसी कठोर प्रकृति वाले कवि को लगा कि उसके आस-पास शेफालिका के फूल झड़ने लगे हों। कवि को बच्चे की मुसकान बहुत मनमोहक लगती है जो मृत शरीर में भी प्राण डाल देती है। उस मुसकान से प्रभावित संन्यास धारण कर चुका कवि पुनः गृहस्थ-आश्रम में लौट आया।
2. प्रस्तुत काव्यांश का भाव है कि कोमल शरीर वाले बच्चे खेलते हुए बहुत आकर्षक लगते हैं। कवि ने यहाँ बच्चे की सुंदर मुसकान की तुलना कमल के फूल से की है। बच्चे की हँसी को देखकर ऐसा लगता है मानो कमल के फूल अपना स्थान परिवर्तित कर तालाब के स्थान पर इस झोंपड़ी में खिलने लगे हैं। आशय यह है कि बच्चे की हँसी को देखकर मन में बहुत उल्लास होता है।
3. प्रस्तुत काव्यांश का भाव है कि बच्चों के स्पर्श में ऐसा जादू होता है कि कोई भी कठोर हृदय जल के समान पिघल जाए। बच्चे के स्पर्श से बाँस तथा बबूल जैसे काँटेदार वृक्ष से भी फूल झरने लगते हैं। भावहीन और संवेदनाशून्य

व्यक्तियों में भी सुख, आनंद और वात्सल्य-रस का संचार हो जाता है। उसी प्रकार बच्चे का स्पर्श पाकर कवि का भी नीरस मन प्रफुल्लित हो जाता है।

4. कवि ने शिशु की माँ को धन्य इसलिए कहा है क्योंकि माँ के माध्यम से ही वह आज अपने बच्चे की दंतुरित मुस्कान देख पाया है जो उसे असीम सुख और आनंद से भर देती है।
5. बच्चे की मुस्कान प्रफुल्लता और जीवंतता से भरी होने के कारण वह मृतक में भी जान डाल देती है। बच्चे की मुसकान इतनी निश्चल होती है कि वह कठोर से कठोर हृदय में भी प्यार का संचार करने का सामर्थ्य रखती है।
6. बच्चे तथा बड़े व्यक्ति की मुसकान में निम्नलिखित अंतर होते हैं-
 - बच्चे अबोध होते हैं। बच्चों की हँसी में निश्छलता होती है लेकिन बड़ों की मुस्कराहट कृत्रिम भी होती है।
 - बच्चे मुस्कुराते समय किसी खास मौके की प्रतीक्षा नहीं करते हैं वे तो बस... अपनी स्वाभाविक मुसकान बिखेरना जानते हैं।
 - बड़े व्यक्ति परिपक्व बुद्धि के होते हैं। जबकि बड़ों के मुसकुराने की खास वजह होती है।
 - बच्चों का मुस्कुराना सभी को प्रभावित करता है परन्तु बड़ों की मुसकान वैसा आकर्षण नहीं रखती।
7. कवि ने बच्चे की मुसकान को 'दंतुरित' कहा है क्योंकि बच्चे के मुस्कुराने पर बच्चे के दाँत भी दिखाई देने लगते हैं और ये दाँत उसकी मुस्कराहट को और भी सुंदर बना देते हैं। उसकी इसी मुस्कराहट से तो पाषाण हृदय पिघल और मृतकों में भी जान आ जाती है।

8. प्रस्तुत कविता में कवि ने फसल उपजाने के लिए मानव परिश्रम, पानी, मिट्टी, सूरज की किरणों तथा हवा जैसे तत्वों को आवश्यक कहा है।
9. 'फसल' कविता में हाथों के स्पर्श की गरिमा' किसानों के परिश्रम को कहा गया है क्योंकि फसल के लिए भले ही पानी, मिट्टी, सूरज की किरणें तथा हवा जैसे तत्वों की आवश्यकता है। परन्तु किसानों के परिश्रम के बिना ये सभी साधन व्यर्थ हैं। यदि किसान अपने परिश्रम के द्वारा इसे भली प्रकार से नहीं सींचे तब तक इन सब साधनों की सफलता नहीं होगी। अतः यह किसान के श्रम की गरिमा ही है जिसके कारण फसलें इतनी अधिक बढ़ती चली जाती हैं।
10. फसल के लिए भले ही पानी, मिट्टी, सूरज की किरणें तथा हवा जैसे तत्वों की आवश्यकता है। परन्तु किसानों के परिश्रम के बिना ये सभी साधन व्यर्थ हैं। यदि किसान अपने परिश्रम के द्वारा इसे भली प्रकार से नहीं सींचे तब तक इन सब साधनों की सफलता नहीं होगी। अतः यह किसान के श्रम की गरिमा ही है जिसके कारण फसलें इतनी अधिक बढ़ती चली जाती हैं।
11. कवि ने फसल को नदियों के जल का जादू इसलिए कहा है क्योंकि कोई फसल जब उपजती है जब उसमें नदियों के जल का योगदान होता है। मिट्टी के अंदर बोये गए बीजों पर नदियों का पानी जादुई असर करता है और इसी से बीज अंकुरित होते हैं। नदियों के जल से ही किसी भी फसल का पोषण होता है। जल से ही फसलों की सिंचाई होती है और फसल तैयार होती है। अतः जल के तत्वों को ग्रहण कर एक स्वस्थ फसल तैयार होती है।

12. कवि के अनुसार फसलें पानी, मिट्टी, धूप, हवा और मानव श्रम के मेल से बनी हैं अर्थात् फसल किसी एक की मेहनत का फल नहीं बल्कि इसमें सभी का योगदान सम्मिलित है।
13. प्रस्तुत पंक्तियों का तात्पर्य यह है कि फसल के लिए सूरज की किरणें तथा हवा दोनों का प्रमुख योगदान है। वातावरण के ये दोनों अवयव ही फसल के योगदान में अपनी-अपनी भूमिका अदा करते हैं। फसलों की हरियाली सूरज की किरणों के प्रभाव के कारण आती है। फसलों को बढ़ाने में हवा की थिरकन का भी योगदान रहता है।
14. मिट्टी के स्वाभाविक व प्राकृतिक तत्वों को मिट्टी का गुणधर्म कहते हैं। मिट्टी में मिले हुए प्राकृतिक तत्व, खनिज पदार्थ और पोषक तत्व के आपसी मेल से किसी मिट्टी का स्वरूप अन्य मिट्टियों से विशेष हो जाता है। किसी भी फसल की उपज मिट्टी के उपजाऊ होने पर निर्भर करती है।

कविता 5 : छाया मत छूना

1. 'छाया मत छूना' कविता में छाया शब्द का प्रयोग सुखद अनुभूति के लिए किया है। कवि ने मानव की कामनाओं-लालसाओं के पीछे भागने की प्रवृत्ति को दुखदायी माना है। हम विगत स्मृतियों के सहारे नहीं जी सकते, हमें वर्तमान में जीना है। अपने वर्तमान के कठिन पलों को बीते हुए पलों की स्मृति के साथ जोड़ना हमारे लिए बहुत कष्टपूर्ण हो सकता है। वह मधुर स्मृति हमें कमजोर बनाकर हमारे दुख को और भी कष्टदायक बना देती है।
2. कवि इन पंक्तियों द्वारा यह बताने का प्रयास कर रहे हैं कि उन्हें समय पर कोई सुख प्राप्त नहीं हुआ। यह उनके लिए बहुत पीड़ादायक था। अतः यहाँ पर उनकी वेदना का वर्णन किया गया है। वे लिखते हैं उन्हें उन्हें सुख तो प्राप्त हुआ परंतु

जब उसका कोई मूल्य नहीं था। इसी के साथ वह खुद को सम्भालते हुए कहते हैं कि जीवन में भविष्य में क्या होगा किसी को पता नहीं इसलिए जो मिले उसका आनंद लो और ना मिले उसे भूल के आगे बढ़ो।

3. छवियों की चित्र-गंध फैली मनभावनी' से तात्पर्य रंग-बिरंगी यादों से हैं।
4. यहाँ पर प्रियतम को प्रेयसी के साथ जो क्षण बिताए थे वे यादें कचोटती हैं।
5. मृगतृष्णा दो शब्दों से मिलकर बना है मृग व तृष्णा। इसका अर्थ है आँखों का भ्रम अर्थात् जब कोई चीज़ वास्तव में न होकर भ्रम की स्थिति बनाए, उसे मृगतृष्णा कहते हैं। इसका प्रयोग कविता में प्रभुता की खोज में भटकने के संदर्भ में हुआ है। इस तृष्णा में फँसकर मनुष्य हिरन की भाँति भ्रम में पड़ा हुआ भटकता रहता है।
6. इन पक्तियों द्वारा कवि शारीरिक और मानसिक अवस्था के अंतर को स्पष्ट करना चाहता है। प्रायः हम दुविधा में फँसकर परिस्थितियों का सामना करने का साहस खो देते हैं। ऐसे में हम शारीरिक रूप से सुखी और प्रसन्न दिखाई देते तो हैं परंतु मन से दुखी ही रहते हैं।
7. प्रस्तुत पंक्ति का भाव यह है कि हमारे विचारों के अनुरूप समय निकल जाने के बाद भी हमारी उपलब्धि हमें आनंद देती है। अक्सर हमारे मन मुताबिक न होने पर हम दुखी हो जाते हैं परंतु हमें इस तरह से दुखी नहीं होना चाहिए। जिस प्रकार बसंत के बीत जाने पर भी खिलने वाला फूल हमें वही सुगंध और प्रसन्नता प्रदान करता है उसी प्रकार बाद में मिलने वाली सफलता भी हमें आनंद ही देती है।

8. 'छाया मत छूना' कविता में कवि ने मानव की कामनाओं-लालसाओं के पीछे भागने की प्रवृत्ति को दुखदायी माना है क्योंकि इसमें अतृप्ति के सिवाय कुछ नहीं मिलता। हम विगत स्मृतियों के सहारे नहीं जी सकते, हमें वर्तमान में जीना है। उन्हें छूकर याद करने से मन में दुख बढ़ जाता है। दुविधाग्रस्त मनःस्थिति व समयानुकूल आचरण न करने से भी जीवन में दुख आ सकता है। व्यक्ति प्रभुता या बड़प्पन में उलझकर स्वयं को दुखी करता है।
9. 'छाया मत छूना' कविता में कवि ने मानव की कामनाओं-लालसाओं के पीछे भागने की प्रवृत्ति को दुखदायी माना है क्योंकि इसमें अतृप्ति के सिवाय कुछ नहीं मिलता। हम विगत स्मृतियों के सहारे नहीं जी सकते, हमें वर्तमान में जीना है। उन्हें छूकर याद करने से मन में दुख बढ़ जाता है। दुविधाग्रस्त मनःस्थिति व समयानुकूल आचरण न करने से भी जीवन में दुख आ सकता है।
10. कवि ने कठिन यथार्थ के पूजन की बात इसलिए कही है क्योंकि यही सत्य है। कवि कहते हैं कि भूली-बिसरी यादें या भविष्य के सपने मनुष्य को दुखी ही करते हैं। हम यदि जीवन की कठिनाइयों व दुःखों का सामना न कर उनको अनदेखा करने का प्रयास करेंगे तो हम स्वयं किसी मंजिल को प्राप्त नहीं कर सकते। मनुष्य को जीवन की कठिनाइयों को यथार्थ भाव से स्वीकार उनसे मुँह न मोड़कर उसके प्रति सकारात्मक भाव से उसका सामना करना चाहिए। तभी स्वयं की भलाई की ओर एक कदम उठाया जा सकता है, नहीं तो सब मिथ्या ही है।
11. 'हर चंद्रिका में छिपी एक रात कृष्णा है' पंक्ति में कवि ने जीवन के हर दुःख के बाद सुख के अनवरत क्रम के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। यहाँ पर चंद्रिका सुखों का तो कृष्णा दुखों का प्रतीक है। जिस प्रकार हर काली रात के बाद

सुखमय दिवस का आगमन होता है ठीक उसी प्रकार जीवन में भी सुख और दुखों का क्रम चलता रहता है। व्यक्ति को यदि इस सुख और दुःख के यथार्थ को झेलना है तो इसका उसे डटकर सामना करना चाहिए। यथार्थ को परास्त करने का केवल यही उपाय है कि उससे संघर्ष कर उसका डटकर सामना किया जाए।

कविता 6 : कन्यादान

1. 'कन्यादान' कविता नारी जागृति से सम्बंधित है। इन पंक्तियों में लड़की की कोमलता तथा कमजोरी को स्पष्ट किया गया है। माँ स्वयं नारी होने के कारण समाज द्वारा निर्धारित सीमाओं और कथित आदर्शों के बंधनों के दुख को झेल चुकी थी। उन्हीं अनुभवों के आधार पर वह अपनी बेटी को अपनी कमजोरी को प्रकट करने से सावधान करती है क्योंकि कमजोर लड़कियों का शोषण किया जाता है।
2. इन पंक्तियों में समाज द्वारा नारियों पर किए गए अत्याचारों की ओर संकेत किया गया है। वह ससुराल में घर-गृहस्थी का काम संभालती है। सबके लिए रोटियाँ पकाती है फिर भी उसे अत्याचार सहना पड़ता है। उसी अग्नि में उसे जला दिया जाता है। नारी का जीवन कष्टों से भरा होता है।
3. 'कन्यादान' कविता नारी जागृति से संबंधित है। इन पंक्तियों द्वारा कन्यादान करते समय माँ के मन को कितना दुःख होता है यह बताया गया है। माँ और बेटी का संबंध मित्रतापूर्ण होता है। माँ बेटी के सर्वाधिक निकट रहने वाली और उसके सुख-दुख की साथिन होती है। कन्यादान करते समय इस गहरे लगाव को वह महसूस कर रही है कि उसके जाने के बाद वह बिल्कुल खाली हो जाएगी। इसलिए माँ के दुःख को प्रमाणिक कहा गया है।

4. यहाँ पर माँ की चिंता बेटी के सयानी अर्थात् समझदार न होने को लेकर है। बेटी अभी सयानी नहीं थी, उसकी उम्र भी कम थी और वह समाज में व्याप्त बुराईयों से अंजान थी। माँ की चिंता यह भी है कि भोली और सरल होने के कारण वह ससुराल में कैसे रहेगी और कहीं उसकी बेटी का जीवन चूल्हा-चौकी तक ही न सिमट जाए।
5. माँ बेटी के सर्वाधिक निकट रहने वाली और उसके सुख-दुख की साथिन होती है। कन्यादान करते समय इस गहरे लगाव को वह महसूस कर रही है कि उसके जाने के बाद वह बिल्कुल खाली हो जाएगी। उसकी बेटी उसकी संचित पूँजी के समान है। जब इस पूँजी अर्थात् बेटी का कन्यादान करेगी तो उसके पास कुछ नहीं बचेगा। इसलिए माँ को अपनी बेटी अंतिम पूँजी लगती है।
6. प्रस्तुत कविता 'कन्यादान' में माँ अपनी बेटी को सीख देते हुए कहती है कि वस्त्र और आभूषणों के भ्रमजाल में मत फँसना। वास्तव में वस्त्र और आभूषण उसके लिए बंधन के समान हैं। इसके माया-जाल में फँसकर स्त्री बहुत दुःख उठाती है। अतः वह अपनी बेटी को इनसे दूर रहने की सलाह देती है।
7. यहाँ पर यह बताया गया है कि बेटी को विवाह के सुखमय जीवन की कल्पना का आभास तो था परंतु उसे विवाह के दूसरे कठोर पक्ष का ज्ञान नहीं था। वह ससुराल में मिलने वाली नई चुनौतियाँ, जिम्मेदारी और सच्चाईयों से अनजान थी।
8. कन्या माता पिता के लिए कोई वस्तु नहीं है बल्कि उसका सम्बन्ध उनके भावनाओं से है। दान वस्तुओं का होता है। बेटियों के अंदर भी भावनाएँ होती हैं। उनका अपना एक अलग अस्तित्व होता है। विवाह के पश्चात् उसका सम्बन्ध नए लोगों से जुड़ता है परन्तु पुराने रिश्तों को छोड़ देना दुःखदायक

होता है। कन्या का दान कर उसे त्याग देना उचित नहीं है। अतः विवाह उसी से करवाए जो आपकी पुत्री के योग्य हो और खुद को आपका ऋणी समझे की आपने अपने जिगर के टुकड़ों को उन्हें दे दिया है।

9. प्रस्तुत कविता 'कन्यादान' में वस्त्र और आभूषणों को स्त्री-जीवन के बंधन इसलिए कहा गया है क्योंकि इसके मोह में पड़कर स्त्री अपने अस्तित्व को भूल जाती है। इस माया-जाल में फँसकर वह अन्याय का विरोध नहीं कर पाती। वस्त्र और आभूषण बेड़ियाँ बनकर स्त्री की स्वतंत्रता को छीन लेते हैं।
10. परंपरागत माँ उस समयानुसार अपनी बेटी को जीवन से समझौता, ससुराल से तालमेल बिठाने, संघर्ष के विरुद्ध आवाज न उठाना का पाठ पढ़ाती थी। परंतु कन्यादान कविता की माँ उसे परंपरागत सीख न देते हुए कहती है कि वह अपनी सुंदरता पर न रीझे, न ही वस्त्र और आभूषणों के शाब्दिक भ्रम में फँसे। सारे कार्य और जिम्मेदारियों का उचित निर्वाह तो करें परंतु किसी अत्याचार को सहन न करें। वह ससुराल में अपने व्यक्तित्व को न खोने, शोषण को न सहने, जीवन में कभी निराश न होने की सीख देती है। अतः कन्यादान कविता की माँ परंपरागत माँ से अनेक रूपों में भिन्न है।

कविता 7 : संगतकार

1. कविता के संदर्भ में मुख्य गायक को नौसिखिया कहा गया है कारण जब कभी गाते-गाते उसका स्वर भटकने लगता है तो संगतकार उस स्वर को सँभाल लेता है तो उसे अपने बचपन की याद आ जाती है जब वह नौसिखिया था।
2. संगतकार के माध्यम से कवि किसी भी कार्य अथवा कला में लगे सहायक कर्मचारियों और कलाकारों की ओर संकेत कर रहा है। जैसे संगतकार मुख्य

गायक के साथ मिलकर उसके सुरों में अपने सुरों को मिलाकर उसके गायन में नई जान फूँकता है और उसका सारा श्रेय मुख्य गायक को ही प्राप्त होता है।

3. संगतकार अपने स्वर को मुख्य गायक के स्वर से ऊँचा नहीं उठाता। जब मुख्य गायक गाते गाते थकान अनुभव करता है तो संगतकार उसे सहयोग देता है। जब गायन करते समय मुख्य गायक-गायिका अपनी लय को लाँघकर भटक जाते हैं तो संगतकार उस भटकाव को सँभालता है। गायन के समय यदि गायक-गायिका का स्वर भारी हो तो संगतकार अपनी आवाज़ से उसमें मधुरता भर देता है। यह उसकी मानवीयता है कि वह मुख्य गायक की श्रेष्ठता बनाए रखता है।
4. बैठने लगता है उसका गला' से आशय मुख्य गायक के तार सप्तक में ऊँची आवाज़ में गाने के दौरान उसके गले के बैठने से है। तारसप्तक में गायन करते समय मुख्य गायक का स्वर बहुत ऊँचाई तक पहुँच जाता है। जिसके कारण स्वर के टूटने का आभास होने लगता है और इसी कारण वह अपने कंठ से ध्वनि का विस्तार करने में कमज़ोर हो जाता है। इसी को 'बैठने लगता है उसका गला' कहा गया है।
5. तारसप्तक में गायन करते समय मुख्य गायक का स्वर बहुत ऊँचाई तक पहुँच जाता है। जिसके कारण स्वर के टूटने का आभास होने लगता है और इसी कारण वह अपने कंठ से ध्वनि का विस्तार करने में कमज़ोर हो जाता है। तब संगतकार उसके पीछे मुख्य धुन को दोहराता चलता है वह अपनी आवाज़ से उसके बिखराव को सँभाल लेता है। इस प्रकार संगतकार मुख्य गायक को ढाढस बँधाता है।

6. सात के समूह को सप्तक कहते हैं। ध्वनि के ऊँचे तथा नीचे लय के आधार पर उसे तीन सप्तकों में विभाजित किया गया है - मंद सप्तक, मध्य सप्तक और तार सप्तक। ध्वनि जब मध्य से ऊपर जाती है तो उसे तार सप्तक कहते हैं।
7. किसी भी क्षेत्र में संगतकार की पंक्ति वाले लोग प्रतिभावान होते हुए भी मुख्य या शीर्ष स्थान पर नहीं पहुँच पाते क्योंकि संगतकार जब मुख्य गायक के पीछे-पीछे गाता है, वह अपनी आवाज़ को मुख्य गायक की आवाज़ से अधिक ऊँचे स्वर में नहीं जाने देते ताकि मुख्य गायक की महत्ता कम न हो जाए। यही हिचक (संकोच) उसके गायन में झलक जाती है। वह कितना भी उत्तम हो परन्तु स्वयं को मुख्य गायक से कम ही रखता है। यह उसकी असफलता का प्रमाण नहीं अपितु उसकी मनुष्यता का प्रमाण है कि वह शक्ति और प्रतिभा के रहते हुए स्वयं को ऊँचा नहीं उठाता, बल्कि अपने गुरु और स्वामी को महत्त्व देने की कोशिश करता है।
8. कवि कहता है- संगतकार जब मुख्य गायक के पीछे-पीछे गाता है वह अपनी आवाज़ को मुख्य गायक की आवाज़ से अधिक ऊँचे स्वर में नहीं जाने देते ताकि मुख्य गायक की महत्ता कम न हो जाए। यही हिचक (संकोच) उसके गायन में झलक जाती है। वह कितना भी उत्तम हो परन्तु स्वयं को मुख्य गायक से कम ही रखता है। लेखक आगे कहता है कि यह उसकी असफलता का प्रमाण नहीं अपितु उसकी मनुष्यता का प्रमाण है कि वह शक्ति और प्रतिभा के रहते हुए स्वयं को ऊँचा नहीं उठाता, बल्कि अपने गुरु और स्वामी को महत्त्व देने की कोशिश करता है।
9. तारसप्तक में गायन करते समय मुख्य गायक का स्वर बहुत ऊँचाई तक पहुँच जाता है। जिसके कारण स्वर के टूटने का आभास होने लगता है और इसी कारण वह अपने कंठ से ध्वनि का विस्तार करने में कमज़ोर हो जाता है। तब

संगतकार उसके पीछे मुख्य धुन को दोहराता चलता है वह अपनी आवाज़ से उसके बिखराव को सँभाल लेता है। इस प्रकार संगतकार मुख्य गायक को ढाढ़स बँधाता है।

10. संगतकार किसी भी सफल व्यक्ति के जीवन में नींव के पत्थर की तरह कार्य करते हैं। संगतकार वे सामान्य जन होते हैं जो बिना किसी के नजरों में आए बिना किसी व्यक्ति को सफलता की चोटी तक पहुँचाते हैं। जिस प्रकार संगीत के क्षेत्र में संगतकार मुख्य गायक के साथ मिलकर उसके सुरों में अपने सुरों को मिलाकर उसके गायन में नई जान फूँकता है और उसका सारा श्रेय मुख्य गायक को ही प्राप्त होता है। उसी प्रकार कला, सिनेमा, राजनीति, उद्योग, खेल आदि में ऐसे अनेक लोग होते हैं जो मुख्य व्यक्ति की सहायता में ही अपनी प्रसिद्धि और संतुष्टि समझते हैं।

11. संगतकार अपने स्वर को मुख्य गायक के स्वर से ऊँचा नहीं उठाता। जब मुख्य गायक गाते गाते थकान अनुभव करता है तो संगतकार उसे सहयोग देता है। जब गायन करते समय मुख्य गायक-गायिका अपनी लय को लाँघकर भटक जाते हैं तो संगतकार उस भटकाव को सँभालता है। गायन के समय यदि गायक-गायिका का स्वर भारी हो तो संगतकार अपनी आवाज़ से उसमें मधुरता भर देता है। यह उसकी मानवीयता है कि वह मुख्य गायक की श्रेष्ठता बनाए रखता है। इस प्रकार वह अपनी विशिष्टता दिखाने के स्थान पर केवल मुख्य गायक के गायन की प्रस्तुति को और अधिक निखारकर उसे प्रसिद्धि दिलाता है। इसलिए कवि ने उसे संगतकार की मनुष्यता कहा है।

12. जब कभी गाते-गाते अंतरे के जटिल तानों के जंगल में मुख्य गायक लय से भटक जाता है तो संगतकार उस भटकाव को सँभालता है। संगतकार अपनी

आवाज़ से उसमें मधुरता भर देता है। इसके कारण मुख्य गायक भटके सुर से स्थायी सुर में आ जाता है।

13. संगीत में एक संगतकार की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। संगतकार हर संभव तरीके से मुख्य गायक की सहायता करता है। मुख्य गायक यदि गाते-गाते थक जाय तो उसे सहयोग देता है। मुख्य गायक लय से भटक जाय तो संगतकार उस भटकाव की संभालता है। वह मुख्य गायक की श्रेष्ठता को किसी भी रूप में कम नहीं होने देता।

[गद्य खंड]

पाठ 1: नेताजी का चश्मा

1. चश्मेवाला कभी सेनानी नहीं रहा परंतु चश्मेवाला एक देशभक्त नागरिक था। उसके हृदय में देश के वीर जवानों के प्रति सम्मान था। वह अपनी ओर से एक चश्मा नेताजी की मूर्ति पर अवश्य लगाता था उसकी इसी भावना को देखकर लोग उसे कैप्टन कहते थे।
2. मूर्ति पर लगे सरकंडे का चश्मा इस बात का प्रतीक है कि आज भी देश की आने वाली पीढ़ी के मन में देशभक्तों के लिए सम्मान की भावना है। भले ही उनके पास साधन न हो परन्तु फिर भी सच्चे हृदय से बना वह सरकंडे का चश्मा भी भावनात्मक दृष्टि से मूल्यवान है। अतः उम्मीद है कि बच्चे गरीबी और साधनों के बिना भी देश के लिए कार्य करते रहेंगे।
3. उचित साधन न होते हुए भी किसी बच्चे ने अपनी क्षमता के अनुसार नेताजी को सरकंडे का चश्मा पहनाया। यह बात उनके मन में आशा जगाती है कि आज भी देश में देश-भक्ति जीवित है भले ही बड़े लोगों के मन में देशभक्ति का

अभाव हो परन्तु वही देशभक्ति सरकंडे के चश्मे के माध्यम से एक बच्चे के मन में देखकर हालदार साहब भावुक हो गए।

4. देशभक्तों ने देश को आज़ादी दिलाने के लिए अपना सर्वस्व देश के प्रति समर्पित कर दिया। आज जो हम स्वतंत्र देश में आज़ादी की साँस ले रहे हैं यह उन्हीं के कारण संभव हो पाया है, उन्हीं के कारण आज़ाद हुआ है। परन्तु यदि किसी के मन में ऐसे देशभक्तों के लिए सम्मान की भावना नहीं है, वे उनकी देशभक्ति पर हँसते हैं तो यह बड़े ही दुःख की बात है। ऐसे लोग सिर्फ़ अपने बारे में सोचते हैं, वे केवल स्वार्थी होते हैं। लेखक ऐसे लोगों पर अपना गुस्सा व्यक्त किया है।
5. पानवाले ने कैप्टन को लँगड़ा तथा पागल कहा है। जो कि अति गैर जिम्मेदाराना और दुर्भाग्यपूर्ण वक्तव्य है। कैप्टन में एक सच्चे देशभक्त के वे सभी गुण मौजूद हैं जो कि पानवाले में या समाज के अन्य किसी वर्ग में नहीं है। वह भले ही लँगड़ा है पर उसमें इतनी शक्ति है कि वह कभी भी नेताजी को बगैर चश्मे के नहीं रहने देता है। अतः कैप्टन पानवाले से अधिक सक्रिय, विवेकशील तथा देशभक्त है।
6. देशभक्तों ने देश को आज़ादी दिलाने के लिए अपना सर्वस्व देश के प्रति समर्पित कर दिया। आज जो हम स्वतंत्र देश में आज़ादी की साँस ले रहे हैं यह उन्हीं के कारण संभव हो पाया है, उन्हीं के कारण आज़ाद हुआ है। परन्तु यदि किसी के मन में ऐसे देशभक्तों के लिए सम्मान की भावना नहीं है, उनके दिखाए हुए रास्तों पर नहीं चलते। तो यह बड़े ही दुःख की बात है। यह देशभक्ति का मज़ाक ही तो है।

पाठ 2: बालगोबिन भगत

1. बालगोबिन भगत के गीतों में एक विशेष प्रकार का आकर्षण था। कबीर के पद उनके कंठ से निकलकर सजीव हो उठते थे। खेतों में जब वे गाना गाते तो स्त्रियों के होंठ बिना गुनगुनाए नहीं रह पाते थे। गर्मियों की शाम में उनके गीत वातावरण में शीतलता भर देते थे। उनके गीतों में जादुई प्रभाव था। संध्या समय जब वे अपनी मंडली समेत गाने बैठते तो उनके द्वारा गाए पदों को उनकी मंडली दोहराया करती थी, भगत के स्वर के आरोह के साथ श्रोताओं का मन भी ऊपर उठता चला जाता और लोग अपने तन-मन की सुध-बुध खोकर संगीत की स्वर लहरी में ही तल्लीन हो जाते। इसलिए बालगोबिन भगत के संगीत को जादू कहा गया है।
2. बालगोबिन भगत एक गृहस्थ थे परन्तु उनमें साधु कहलाने वाले गुण भी थे –
 - कबीर के आदर्शों पर चलते थे, उन्हीं के गीत गाते थे। वे शरीर को नश्वर तथा आत्मा को परमात्मा का अंश मानते थे।
 - कभी झूठ नहीं बोलते थे, खरा व्यवहार रखते थे।
 - किसी से भी सीधी बात करने में संकोच नहीं करते थे, न किसी से झगड़ा करते थे।
 - किसी की चीज़ नहीं छूते थे न ही बिना पूछे व्यवहार में लाते थे। वे किसी दूसरे की चीज़ नहीं लेते थे।
 - उनके खेत में जो कुछ पैदा होता उसे एक कबीरपंथी मठ में ले जाते और उसमें से जो हिस्सा 'प्रसाद' रूप में वापस मिलता, वे उसी से गुजारा करते।
 - उनमें लालच बिल्कुल भी नहीं था। इस प्रकार वे अपना सब कुछ ईश्वर को समर्पित कर देते थे।

3. बेटे की मृत्यु पर भगत ने पुत्र के शरीर को एक चटाई पर लिटा दिया, उसे सफेद चादर से ढक दिया तथा वे कबीर के भक्ति गीत गाकर अपनी भावनाएँ व्यक्त करने लगे। उनके अनुसार आत्मा परमात्मा के पास चली गई, विरहनि अपने प्रेमी से जा मिली। उन दोनों के मिलन से बड़ा आनंद और कुछ नहीं हो सकता। इस प्रकार भगत ने शरीर की नश्वरता और आत्मा की अमरता का भाव व्यक्त किया।
4. बालगोबिन भगत की दिनचर्या लोगों के अचरज का कारण इसलिए बन गई थी क्योंकि वे जीवन के सिद्धांतों और आदर्शों का अत्यंत गहराई से पालन करते हुए उन्हें अपने आचरण में उतारते थे। वृद्ध होते हुए भी उनकी स्फूर्ति में कोई कमी नहीं थी। सर्दी के मौसम में भी, भरे बादलों वाले भादों की आधी रात में भी वे भोर में सबसे पहले उठकर गाँव से दो मील दूर स्थित गंगा स्नान करने जाते थे, खेतों में अकेले ही खेती करते तथा गीत गाते रहते। विपरीत परिस्थिति होने के बाद भी उनकी दिनचर्या में कोई परिवर्तन नहीं आता था। एक वृद्ध में अपने कार्य के प्रति इतनी सजगता को देखकर लोग दंग रह जाते थे।
5. 'बालगोबिन भगत' पाठ में निम्नलिखित सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार किया गया है:
- जब बालगोबिन भगत के बेटे की मृत्यु हुई उस समय सामान्य लोगों की तरह शोक करने की बजाए भगत ने उसकी शैया के समक्ष गीत गाकर अपने भाव प्रकट किए- "आत्मा का परमात्मा से मिलन हो गया है। यह आनंद मनाने का समय है, दुःखी होने का नहीं।"
 - बेटे के क्रिया-कर्म में भी उन्होंने सामाजिक रीति-रिवाजों की परवाह न करते हुए अपनी पुत्रवधू से ही दाह संस्कार संपन्न कराया।

- समाज में विधवा विवाह का प्रचलन न होने के बावजूद भी उन्होंने अपनी पुत्रवधू को जबरदस्ती उसके भाई के साथ भेजकर उसके दूसरे विवाह का निर्णय किया।
- अन्य साधुओं की तरह भिक्षा माँगकर खाने के विरोधी थे।

6. बालगोबिन भगत द्वारा कबीर पर श्रद्धा निम्नलिखित रूपों में प्रकट हुई है -

- कबीर गृहस्थ होकर भी सांसारिक मोह-माया से मुक्त थे। उसी प्रकार बाल गोबिन भगत ने भी गृहस्थ जीवन में बँधकर भी साधु समान जीवन व्यतीत किया।
- कबीर के अनुसार मृत्यु के पश्चात् जीवात्मा का परमात्मा से मिलन होता है। बेटे की मृत्यु के बाद बाल गोबिन भगत ने भी यही कहा था। उन्होंने बेटे की मृत्यु पर शोक मानने की बजाए आनंद मनाने के लिए कहा था।
- भगतजी ने अपनी फसलों को भी ईश्वर की सम्पत्ति माना। वे फसलों को कबीरमठ में अर्पित करके प्रसाद रूप में पाई फसलों का ही उपभोग करते थे। कबीर के विचार भी कुछ इस प्रकार के ही थे-
"साई इतना दीजिए, जामे कुटुम समाए।
मैं भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाए॥
- पहनावे में भी वे कबीर का ही अनुसरण करते थे।
- कबीर गाँव-गाँव, गली-गली घूमकर गाना गाते थे, भजन गाते थे। बाल गोबिन भगत भी इससे प्रभावित हुए। कबीर के पदों को वे गाते फिरते थे।
- बालगोबिन भगत प्रचलित सामाजिक मान्यताओं को कबीर की तरह ही नहीं मानते थे।

7. अपने एकलौते लड़के के देहांत के समय सामाजिक परंपराओं के अनुरूप अपने पुत्र का क्रिया-कर्म नहीं किया। उन्होंने कोई तूल न करते हुए बिना कर्मकांड के श्राद्ध-संस्कार कर दिया। बेटे की मृत्यु के समय सामान्य लोगों की तरह शोक करने की बजाए भगत ने उसकी शैया के समक्ष गीत गाकर अपने भाव प्रकट किए। बेटे के क्रिया-कर्म में भी उन्होंने सामाजिक रीति-रिवाजों की परवाह न करते हुए अपनी पुत्रवधू से ही दाह संस्कार संपन्न कराया। समाज में विधवा विवाह का प्रचलन न होने के बावजूद भी उन्होंने अपनी पुत्रवधू के भाई को बुलाकर उसकी दूसरी शादी कर देने को कहा। इन बातों से यह सिद्ध होता है कि बालगोबिन भगत प्रगतिशील विचारधारा के थे।
8. भगत की पुत्रवधू उन्हें अकेले छोड़कर नहीं जाना चाहती थी क्योंकि भगत के बुढ़ापे का वह एकमात्र सहारा थी। पुत्रवधू को इस बात की चिंता थी कि यदि वह भी चली गयी, तो भगत के लिए भोजन कौन बनाएगा। यदि भगत बीमार हो गए, तो उनकी सेवा-शुश्रूषा कौन करेगा। उसके चले जाने के बाद भगत की देखभाल करने वाला और कोई नहीं था।
9. बाल गोबिन की मृत्यु के विषय में यह धारणा थी कि मृत्यु तो आत्मा और परमात्मा का मिलन होता है। मृत्यु तो कोई विरहिनी का अपने प्रेमी से मिलन होता है और इससे बड़ी आनंद की कोई बात क्या हो सकती है इसलिए मृत्यु शोक मनाने का नहीं बल्कि उत्सव मनाने की चीज है।
10. 'बुढ़ापा आ गया था किंतु टेक वही जवानी वाली' से आशय भगत के न बदलने वाले नित-नियमों से है। बालगोबिन भगत वृद्ध हो गए थे परंतु उनकी दैनिक दिनचर्या में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ था। वृद्धावस्था में भी उन्होंने उन्होंने अपने गंगा स्नान बहाने संत समागम के नियम को नहीं तोड़ा। रास्ते

में किसी का आश्रय न लेना, खंजड़ी बजाना, भजन गाना और पूरा रास्ता पैदल ही चलना साबित करता है कि बुढ़ापा आने पर भी भगत की दिनचर्या में कोई परिवर्तन न हुआ।

11. एक साधु की पहचान उसके पहनावे के साथ-साथ उसके आचार-व्यवहार तथा इसकी जीवन प्रणाली पर भी आधारित होती है। सच्चा साधु हमेशा, मोह माया, आडम्बरयुक्त जीवन, लालच आदि दुर्गुणों से दूर रहता है। पाठ में बालगोबिन भगत गृहस्थ होते हुए भी एक सच्चे साधु की कसौटी पर एकदम खरे उतरते हैं। बालगोबिन भगत गृहस्थ होते हुए भी चीजों का संचयन नहीं करते थे, अपनी दिनचर्या का नियम से पालन करते थे, आडंबरों से कोसों दूर रहते थे और त्यागी की प्रवृत्ति का सदा पालन किया करते थे।

पाठ 3 : लखनवी अंदाज

1. आमतौर पर लोग खीरे को काटकर खा लेते हैं परंतु नवाब साहब ने बहुत ही यत्न से खीरा काटा, नमक-मिर्च बुरका, अंततः सूँघकर ही खिड़की से बाहर फेंक दिया। इस तरह से नवाब साहब का खीरा खाने का ढंग अन्य लोगों से अलग था।
2. नवाब साहब खीरा खाने के माध्यम से यह दिखाना चाहते थे कि नवाबों के खीरा खाने का यही खानदानी रईसी तरीका है।
3. नवाब साहब खीरा न खाने की अपनी खीज मिटाने के लिए यह बहाना बना देते हैं कि वैसे खीरा खाने में तो बड़ा ही लजीज होता है परंतु पेट के लिए ठीक नहीं रहता। इसलिए उन्होंने खीरा नहीं खाया।

4. लेखक के अचानक डिब्बे में कूद पड़ने से नवाब-साहब की आँखों में एकांत चिंतन में खलल पड़ जाने का असंतोष दिखाई दिया। ट्रेन में लेखक के साथ बात-चीत करने के लिए नवाब साहब ने कोई उत्साह नहीं प्रकट किया। लेखक से कोई बातचीत भी नहीं की और न ही उनकी तरफ देखा। इससे लेखक को स्वयं के प्रति नवाब साहब की उदासीनता का आभास हुआ।
5. नवाब साहब ने खीरे को शारीरिक रूप से न ग्रहणकर मानसिक रूप से ग्रहण किया। नवाब साहब लेखक को यह बताना चाह रहे थे कि खीरे जैसी मामूली वस्तु उनके जैसे रईसों के लिए नहीं है। नवाब साहब ने जिस तरह से खीरे को सूँघकर खिड़की से बाहर फेंक दिया। वह नवाब साहब की नवाबों की झूठी सनक ही दिखाती है। केवल किसी को यह जताना कि वे कितने रईस हैं ये केवल सनक की प्रमाणित करती है। ऐसा व्यवहार अहंकारी और दिखावटीपन को ही दर्शाता है।
6. नवाब साहब द्वारा सेकंड क्लास में यात्रा करने के निम्न कारण हो सकते हैं।
- नवाब की आर्थिक स्थिति शायद ठीक न रही हो। वे केवल अब कहने के नवाब भर रह गए हों।
 - फर्स्ट क्लास का टिकट महँगा होने के कारण सेकंड क्लास में सफर करना।
7. नवाब-साहब में बड़े यत्न से खीरे को धो-पौछकर, काटकर, नमक-मिर्च बुरका और सूँघकर खीरे की एक-एक फांके करके सभी फांकों को खिड़की से बाहर फेंक दिया और लेखक की ओर गुलाबी आँखों से देखा जैसे वे लेखक को बताने का प्रयास कर रहे हों कि नवाब लोग खीरे जैसी साधारण वस्तु को इसी तरह से खाते हैं। वास्तव में नवाब लेखक को नवाबी झूठी शान दिखाना चाहते थे।

8. 'लखनवी अंदाज' पाठ में नवाब की झूठी शान पर व्यंग किया गया है। नवाबों की नवाबी तो न रही पर अब भी अपने क्रिया-कलापों और हाव-भाव से अपनी शान बघारना नहीं भूलते हैं। जब भी मौका मिले अपनी बनावटी रईसी को दिखाने से नहीं चूकते। पाठ के नवाब साहब खीरे को जिस तरह से खिड़की से फेंक देते हैं वह उनकी झूठी नवाबी शान की ओर ही इशारा करता है।
9. नहीं, आज की इस बदलती परिस्थितियों में नवाब साहब जैसी जीवनशैली का निर्वाह कतई नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार की दिखावटी शैली से कुछ समय के लिए आप जरूर लोगों को प्रभावित कर सकते हो परंतु अंत में सच्चाई सामने आते ही उन्हीं लोगों की नजरों में आप उतर भी जाते हो। इस प्रकार की जीवन शैली आपकी प्रगति का आधार नहीं बन सकती उलटे वह आपके पतन का ही कारण बनती है। आंडबरयुक्त जीवन की अपेक्षा सरल, सहज और गतिशील जीवन ही आज के समय की माँग है।

पाठ 4 : मानवीय करुणा की दिव्य चमक

1. फ़ादर बुल्के मानवीय करुणा से ओतप्रोत विशाल हृदय वाले और सभी के कल्याण की भावना रखने वाले महान व्यक्ति थे। देवदार का वृक्ष आकार में लंबा-चौड़ा होता है तथा छायादार भी होता है।
- फ़ादर बुल्के का व्यक्तित्व भी कुछ ऐसा ही है। जिस प्रकार देवदार का वृक्ष लोगों को छाया देकर शीतलता प्रदान करता ठीक उसी प्रकार फ़ादर बुल्के भी अपने शरण में आए लोगों को आश्रय देते थे।
- हर व्यक्ति उनसे सहारा और स्नेह पा सकता था तथा दुःख के समय में सांत्वना के वचनों द्वारा उनको शीतलता प्रदान करते थे।

2. फ़ादर बुल्के के हिन्दी-प्रेम का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उन्होंने सबसे प्रमाणिक अंग्रेजी-हिन्दी कोश तैयार किया। भारत आकर उन्होंने कलकत्ता से हिंदी में बी.ए. तथा इलाहाबाद से एम.ए. किया। उन्होंने "रामकथा: उत्पत्ति और विकास।" पर शोध कर पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की। ब्लूबर्ड का अनुवाद 'नील पंछी' के नाम से तथा 'बाइबिल' का हिंदी अनुवाद किया। सेंट जेवियर्स कॉलेज राँची में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष बने। वे 'परिमल' नामक संस्था के साथ भी जुड़े रहे हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए उन्होंने अनेक प्रयास किए तथा लोगों को हिंदी भाषा के महत्त्व को समझाने के लिए विभिन्न तर्क दिए।
3. फ़ादर बुल्के मानवीय करुणा की प्रतिमूर्ति थे। उनके मन में सभी के लिए प्रेम भरा था जो कि उनके चेहरे पर स्पष्ट दिखाई देता था। वे लोगों को अपने आशीर्षों से भर देते थे। उनकी आँखों की चमक में असीम वात्सल्य तैरता रहता था। दुःख से विरक्त लोगों को वे सांत्वना के दो बोल बोलकर शीतलता प्रदान करते थे। किसी भी मानव का दुःख उनसे देखा नहीं जाता था। उसके कष्ट दूर करने के लिए वे यथाशक्ति प्रयास करते थे।
4. फ़ादर कामिल बुल्के की मृत्यु पर उनके मित्र, परिचित और साहित्यिक मित्र इतनी अधिक संख्या में रोए कि उनको गिनना कठिन है उस समय रोने वालों की सूची तैयार करना कठिन था अर्थात् बहुत लोग थे। इसलिए रोने वालों के बारे में लिखना स्याही खर्च करने जैसा था।
5. संन्यासी की परंपरागत छवि ऐसी है कि वह घर संसार से विरक्त होकर भगवान के भजन में लगा रहता है। उसे सांसारिक वस्तुओं व लोगों के प्रति कोई अनुराग नहीं होता। वह समाज से अलग अपने-आप में तल्लीन रहता है। वह

अपने तथा अन्य लोगों के सुख-दुख से पूर्णतया विरक्त रहता है। परन्तु संन्यासी जीवन के परंपरागत गुणों से अलग भी फ़ादर बुल्के की भूमिका रही है; जैसे-इन्होंने संन्यास ग्रहण करने के पश्चात् अपना अध्ययन जारी रखा, कुछ दिनों तक ये कॉलेज में भी पढ़ाते रहे तथा अन्य सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेते रहे। वे धर्माचार की परवाह किए बिना अन्य धर्म वालों के

उत्सवों-संस्कारों में भी घर के बड़े बुजुर्गों की भांति शामिल होते थे इसलिए फ़ादर बुल्के की छवि परंपरागत संन्यासियों से अलग थी।

6. फ़ादर बुल्के की मृत्यु जहरबाद अर्थात् गैंग्रीन से हुई। उनके शरीर में फोड़े का जहर फैल गया था। लेखक ने जब फ़ादर की मृत्यु का समाचार सुना तो बहुत अधिक उदास होकर सोचने लगे कि फ़ादर जैसे ममतामयी व्यक्तित्व को इस तरह से जहरबाद से नहीं मरना चाहिए था। लेखक के अनुसार फ़ादर बुल्के ने आजीवन दूसरों के दुःख दूर करने का प्रयत्न किया सभी से वे सहानुभूति और करुणा रखते थे। ऐसे परोपकारी और करुणामय व्यक्ति की मौत कष्टकारी तो होनी ही नहीं चाहिए थी। लेखक जहरबाद को फ़ादर बुल्के के प्रति अन्याय समझते थे।

7. फ़ादर का जन्म 'रेम्सचैपल' थी परन्तु यदि कोई उनसे उनके देश का नाम पूछता तो वे उसे भारत ही बताते। उन्होंने ने भारत में आकर न केवल हिंदी और संस्कृत को पढ़ा बल्कि संस्कृत कॉलेज में विभागाध्यक्ष भी रहे। उन्होंने सबसे प्रमाणिक अंग्रेजी-हिन्दी कोश तैयार किया। उन्होंने "रामकथा : उत्पत्ति और विकास" पर शोध कर पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की। ब्लूबर्ड का अनुवाद 'नील पंछी' के नाम से तथा 'बाइबिल' का हिंदी अनुवाद किया। हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए उन्होंने अनेक प्रयास किए तथा लोगों को हिंदी भाषा के महत्त्व को समझाने के लिए विभिन्न तर्क दिए। इन सभी बातों से पता चलता है। कि फ़ादर बुल्के भारतीयता में पूरी तरह रच-बस गए।

पाठ 5 : एक कहानी यह भी

1. 'भटियारखाना' शब्द भट्टी (चूल्हा) से बना है। यहाँ पर प्रतिभाशाली लोग नहीं जाते हैं लेखिका के पिता का मानना था रसोई के काम में लग जाने के कारण लड़कियों की क्षमता और प्रतिभा नष्ट हो जाती है। वे पकाने-खाने तक ही सीमित रह जाती हैं और अपनी सही प्रतिभा का उपयोग नहीं कर पातीं। सम्भवतः इसलिए लेखिका के पिता ने रसोई को 'भटियारखाना' कहकर संबोधित किया होगा।

2. लेखिका के जीवन पर दो लोगों का विशेष प्रभाव पड़ा।

पिता का प्रभाव- लेखिका के जीवन पर पिताजी का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे हीन भावना से ग्रसित हो गईं। इसी के परिमाण स्वरूप उनमें आत्मविश्वास की भी कमी हो गई थी। पिता के द्वारा ही उनमें देश प्रेम की भावना का भी निर्माण हुआ था।

शिक्षिका शीला अग्रवाल का प्रभाव- शीला अग्रवाल की जोशीली बातों ने एक ओर लेखिका के खोए आत्मविश्वास को पुनः लौटाया तो दूसरी ओर देशप्रेम की अंकुरित भावना को उचित माहौल प्रदान किया। जिसके फलस्वरूप लेखिका खुलकर स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने लगी।

3. मन्नू भंडारी की माँ के बारे में कहा है कि उनकी माँ एक अति धैर्यवान, सीधी-साधी, कम इच्छाएँ रखने वाली और सहनशील महिला थी। घर में शांति बनाए रखने के लिए उनके पिता की हर बात मान लेती थी। कभी किसी बात का विरोध नहीं करती थीं। घर के कर्तव्यों का पूरी तन्मयता से पालन करती थी। परिवार के बच्चों की उचित-अनुचित सभी माँगों को पूरा करने का प्रयास करती थी। उनके लिए घर तथा परिवार ही सबकुछ था। स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं था। इसलिए वह लेखिका के लिए कभी आदर्श पात्र नहीं रही।

4. लेखिका के पिता एक समाज-सेवक थे। उन्होंने आजीवन लोगों की मदद की, बहुत से गरीब बच्चों को पढ़ा-लिखाकर काबिल बनाया परंतु जब उनका बुरा वक्त आया तो सबने उनको धोखा दिया। इसलिए मन्नू भंडारी के पिता का स्वभाव शक्की हो गया था।
5. लेखिका के अनुसार उनकी माँ का उनके पिता से हटकर कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं था वे हर समय उनके पिताजी की डाँट-फटकार को चुपचाप सुन लेती थी। लेखिका की माँ की जीवन सदैव घर की चाहरदीवारी से ही सबद्ध रहा इसलिए लेखिका ने ऐसा कहा है कि भले उनकी माँ त्याग और धैर्य की पराकाष्ठा रही हो परंतु उनके लिए वे कभी आदर्श नहीं बन पाईं।
6. लेखिका के पिता लेखिका को घर में होने वाली बहसों में बैठने के लिए इसलिए कहते थे ताकि लेखिका देश में घटित होने वाली घटनाओं और देश के आंदोलनों के बारे में जान पाएँ।
7. लेखिका के पिताजी लेखिका को समाज और देश के प्रति जागरूक तो बनाना चाहते थे परन्तु एक निश्चित सीमा तक। लेखिका का स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेकर भाषण देना, हाथ उठाकर नारे लगवाना, लड़कों के साथ सड़कों पर घूमना उन्हें पसंद नहीं था इस बात पर लेखिका और उनके पिता की वैचारिक टकराहट हो जाया करती थी। यद्यपि उनके पिताजी भी देश की स्थितियों के प्रति जागरूक थे। वे स्त्रियों की शिक्षा के विरोधी नहीं थे परन्तु वे स्त्रियों का दायरा चार दीवारी के अंदर ही सीमित रखना चाहते थे। परन्तु लेखिका खुले विचारों की महिला थी। इस बात पर लेखिका की उनसे वैचारिक टकराहट हो जाती थी। लेखिका के पिता लड़की की शादी जल्दी करने के पक्ष में थे। लेकिन लेखिका जीवन की आकांक्षाओं को पूर्ण करना चाहती थी। पिताजी का लेखिका की माँ

के साथ अच्छा व्यवहार नहीं था। अपनी माँ के प्रति ऐसा व्यवहार लेखिका को उनके पिताजी की ज़्यादती लगती थी।

8. पास-पड़ोस मनुष्य की वास्तविक शक्ति होती है। आज घर के स्त्री-पुरुष दोनों ही कामकाज के सिलसिले में ज्यादा से ज्यादा समय घर से बाहर ही रहते हैं इसलिए लोगों के पास समय का अभाव होता जा रहा है। मनुष्य के सम्बन्धों का क्षेत्र सीमित होता जा रहा है, मनुष्य आत्मकेन्द्रित होता जा रहा है। यही कारण है कि आज के समाज में 'पड़ोस-कल्चर' लगभग लुप्त होता जा रहा है। मनुष्य के पास इतना समय नहीं है कि वो अपने पड़ोसियों से मिलकर बात-चीत करें, उनके सुख-दुःख को बाँटें, या तीज त्योहार साथ ही मना सकें।
9. अपने समय में लेखिका को खेलने तथा पढ़ने की आज़ादी तो थी लेकिन अपने पिता द्वारा निर्धारित सीमा तक ही। परन्तु आज स्थिति बदल गई है। आज लड़कियाँ प्रतिस्पर्धात्मक खेल खेलती हैं जो कि उनके माता-पिता, समाज द्वारा प्रोत्साहित होता है और ये खेल पड़ोस खेल संस्कृति (गिल्ली-डंडा, पतंग उड़ाना, कंचे से खेलना आदि) से पूर्णतया भिन्न है। आज महिलाएँ देश तथा अपने माता-पिता दोनों का नाम राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ऊँचा कर रही हैं। परन्तु इसके साथ दूसरा पहलू यह भी है कि आज भी हमारे देश में कुछ लोग स्त्री स्वतंत्रता के पक्षधर नहीं हैं।
10. 1942-47 का समय स्वतंत्रता-आंदोलन का समय था हर एक युवा पूरे जोश-खरोश से इस आंदोलन में बढ़ चढ़कर हिस्सा ले रहा था ऐसे में लेखिका मन्नू भंडारी ने भी इस आंदोलन का अभिन्न हिस्सा बनकर अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। उसने पिता के विरुद्ध सड़कों पर घूम-घूमकर नारेबाजी, हड़तालें, जलसे

जुलूस किए। इस आंदोलन में उन्होंने अपने भाषण, उत्साह तथा अपनी संगठन-क्षमता के द्वारा सहयोग प्रदान किया।

पाठ 6: नौबतखाने में इबादत

1. मशहूर शहनाई वादक "बिस्मिल्ला खाँ" का जन्म डुमराँव गाँव में ही हुआ था। इसके अलावा शहनाई बजाने के लिए रीड का प्रयोग होता है। रीड अंदर से पोली होती है, जिसके सहारे शहनाई को फूँका जाता है। रीड, नरकट से बनाई जाती है जो डुमराँव में मुख्यतः सोन नदी के किनारे पाई जाती है। इसी कारण शहनाई की दुनिया में डुमराँव का महत्व है।
2. बिस्मिल्ला खाँ पाँचों वक्त नमाज़ के बाद खुदा से सच्चा सुर पाने की प्रार्थना करते थे। वे खुदा से कहते थे कि उन्हें इतना प्रभावशाली सच्चा सुर दें और उनके सुरों में दिल को छूने वाली ताकत बख़्शे उनके शहनाई के स्वर आत्मा तक प्रवेश करें और उसे सुनने वालों की आँखों से सच्चे मोती की तरह आँसू निकल जाए। यही उनके सुर की कामयाबी होगी।
3. काशी की अनेकों परम्पराएँ धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं पहले काशी खानपान की चीज़ों के लिए विख्यात हुआ करता था। परन्तु अब वह बात नहीं रह गई है। कुलसुम की छन्न करती संगीतात्मक कचौड़ी और देशी घी की जलेबी आज नहीं रही है। संगीत, साहित्य और अदब की परंपरा में भी धीरे-धीरे कमी आ गई है। अब पहले जैसा प्यार और भाईचारा हिन्दूओं और मुसलमानों के बीच देखने को नहीं मिलता। गायक कारों के मन में भी संगत करने वाले कलाकारों के प्रति बहुत अधिक सम्मान नहीं बचा है। काशी की इन सभी लुप्त होती परंपराओं के कारण बिस्मिल्ला खाँ दुःखी थे।

4. बिस्मिल्ला खाँ को खुदा के प्रति विश्वास है कि वह एकदिन सच्चा सुर रूपी फल देंगे। बिस्मिल्ला खाँ पाँचों वक्त नमाज़ के बाद खुदा से सच्चा सुर पाने की प्रार्थना करते थे। वे खुदा से कहते थे कि उन्हें इतना प्रभावशाली सच्चा सुर दें और उनके सुरों में दिल को छूने वाली ताकत बख़्शे उनके शहनाई के स्वर आत्मा तक प्रवेश करें और उसे सुनने वालों की आँखों से सच्चे मोती की तरह आँसू निकल जाए। यही उनके सुर की कामयाबी होगी।
5. काशी में अभी-भी गंगा मैया, बाबा विश्वनाथ तथा बालाजी का मंदिर शेष बचा हुआ है। काशी आज भी संगीत के स्वर से जगती है और उसी की थापों पर सोती है। काशी में मरण भी मंगलमय माना जाता है। काशी में आज भी बिस्मिल्ला खाँ जैसा सुर और लय की तमीज सीखाने वाला नायब हीरा है।
6. बिस्मिल्ला खाँ का बचपन से ही बालाजी मंदिर के साथ घनिष्ठ संबंध रहा है। बिस्मिल्ला खाँ के दिन की शुरुआत इसी बालाजी मंदिर की इयोढ़ी पर होती थी। चौदह वर्ष के उम्र से बिस्मिल्ला खाँ रोजाना बालाजी मंदिर के नौबतखाने में रियाज किया करते थे। उनके अब्बाजान भी बालाजी मंदिर की इयोढ़ी पर शहनाई बजाया करते थे। बिस्मिल्ला खाँ के नानाजी बालाजी मंदिर में बड़े मशहूर शहनाई वादक रहे चूके हैं उनकी कई पुस्तों ने इसी बालाजी मंदिर में शहनाई बजाई थी।
7. 'तुम लोगों कि तरह बनाव-सिंगार देखते रहते तो उमर ही बीत जाती, हो चुकती शहनाई' से आशय आज के युवा वर्ग के संगीत की सच्ची साधना की प्रेरणा देने से है। बिस्मिल्ला खाँ आज के युवा वर्ग से कहते हैं कि यदि बनाव-श्रृंगार के आकर्षण में फँसे रहोगे तो संगीत की सच्ची साधना नहीं कर पाओगे। संगीत की ऊँचाइयों तक पहुँचने के लिए बाहरी आकर्षणों से दूरी आवश्यक है।

8. बिस्मिल्ला खाँ के व्यक्तित्व की निम्न विशेषताएँ हमें प्रभावित करती हैं-

- मुस्लिम होने के बाद भी अपने धर्म के साथ-साथ वे हिन्दू धर्म को भी उतना ही सम्मान देते थे।
- भारत रत्न की उपाधि मिलने के बाद भी वे पैबंद लगी लुंगिया पहन लेते थे इससे उनके एक सीधे-सादे, सरल तथा सच्चे इंसान की झलक मिलती है।
- उनमें संगीत के प्रति सच्ची लगन तथा सच्चा प्रेम था। इसलिए कुलसुम की कचौड़ी तलने की कला में भी संगीत का आरोह-अवरोह देखा करते थे।
- वे अपनी मातृभूमि से सच्चा प्रेम करते थे। शहनाई और काशी को कभी न छोड़ने की बात करते थे जैसे शहनाई और खाँ साहब एक दूसरे के पूरक हो।

9. मांगलिक विधि-विधानों के अवसर पर शहनाई बजाई जाती है। पारंपरिक अवधी लोकगीतों एवं चैती में शहनाई का उल्लेख बार-बार मिलता है। इस वजह से शहनाई को मंगल का परिवेश प्रतिष्ठित करने वाला वाद्य माना जाता है। उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ शहनाई वादन के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान रखते हैं। इसी वाद्य में निपुणता के कारण वह भारत रत्न से सम्मानित हुए। इन्हीं कारणों के वजह से बिस्मिल्ला खाँ को शहनाई की मंगलध्वनि का नायक कहा गया है।

10. उनका धर्म मुस्लिम था। वे अपने मजहब के प्रति समर्पित थे। पाँचों वक्त की नमाज़ अदा करते थे। मुहर्रम के महीने में आठवी तारीख के दिन खाँ साहब खड़े होकर शहनाई बजाते थे व दालमंडी में फातमान के करीब आठ किलोमीटर की दूरी तक पैदल rote हुए, नौहा बजाते जाते थे। इसी तरह इनकी श्रद्धा काशी विश्वनाथ जी और बालाजी मंदिर के प्रति भी थी। वे जब भी काशी से बाहर रहते थे। तब विश्वनाथ व बालाजी मंदिर की दिशा की ओर मुँह करके बैठते थे और उसी ओर शहनाई बजाते थे। वे अक्सर कहा करते थे कि काशी छोड़कर कहाँ जाए, गंगा मइया यहाँ, बाबा विश्वनाथ यहाँ, बालाजी

का मंदिर यहाँ। मरते दम तक न यह शहनाई छूटेगी न काशी। इसलिए हम कह सकते हैं कि बिस्मिल्ला खाँ मिली जुली संस्कृति के प्रतीक थे।

11. उस्ताद बिस्मिल्लाह खान को सन् 2001 में भारत का सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' मिल चुका है। उन्हें 1968 में 'पद्म भूषण' भी मिल चुका है। इसके अलावा उन्हें कला रत्न पुरस्कार भी मिल चुका है।

उस्ताद बिस्मिल्लाह खान भारत के प्रसिद्ध शहनाई वादक थे। वह गंगा-जमुनी तहजीब के प्रतीक थे। उनका जीवन सादगी और उच्च विचारों से परिपूर्ण था। एक तरफ जहाँ वो सच्चे मुसलमान की तरह पाँचों वक्त की नमाज पढ़ते थे, तो दूसरी तरफ काशी की परंपरा को निभाते हुए मंदिरों में शहनाई वादन भी करते थे। वह गंगा को गंगा मैया कहकर पुकारते थे। हिंदू-मुस्लिम एकता की प्रतीक के रूप में उनकी पहचान बनी रहेगी क्योंकि वह किसी भी धर्म के प्रति कट्टर नहीं थे और सभी धर्मों का सम्मान करते थे।

12. मुहर्रम पर्व के साथ बिस्मिल्ला खाँ और शहनाई का सम्बन्ध बहुत गहरा है। मुहर्रम के महीने में शिया मुसलमान शोक मनाते थे। इसलिए पूरे दस दिनों तक उनके खानदान का कोई व्यक्ति न तो मुहर्रम के दिनों में शहनाई बजाता था और न ही संगीत के किसी कार्यक्रम में भाग लेते थे। आठवीं तारीख खाँ साहब के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण होती थी। इस दिन खाँ साहब खड़े होकर शहनाई बजाते और दालमंडी में फातमान के करीब आठ किलोमीटर की दूरी तक पैदल rote हुए, नौहा बजाते हुए जाते थे। इन दिनों कोई राग-रागिनी नहीं बजाई जाती थी। उनकी आँखें इमाम हुसैन और उनके परिवार के लोगों की शहादत में नम रहती थीं।

पाठ 1: माता का आँचल

1. आज के समय के अनुसार ग्रामीण जीवन और शहरी जीवन की तुलना करें तो पहले की मुकाबले दोनों जीवन में अब विशेष अंतर नहीं रह गया है। देश की आजादी के समय 70 साल पहले ग्रामीण जीवन और शहरी जीवन में एक बड़ा अंतर होता था। गाँव अत्याधिक पिछड़े होते थे और उनमें पर्याप्त सुख सुविधाओं का अभाव होता था। तकनीक की तो बात दूर तब गाँवों में बिजली भी नहीं होती थी। लेकिन अब समय बदल गया है आजादी को 70 साल बीत गए हैं।

70 साल में एक बड़ा परिवर्तन आ गया है। अब गाँव-गाँव में बिजली पहुँच चुकी है और तकनीक ने अपने पाँव गाँव तक पसार दिए हैं। अब गाँव में भी विज्ञान का प्रभाव बढ़ता जा रहा है; जैसे- लालटेन के स्थान पर बिजली, बैल के स्थान पर ट्रैक्टर का प्रयोग, घरेलू खाद के स्थान पर बाज़ार में उपलब्ध कृत्रिम खाद का प्रयोग तथा विदेशी दवाइयों का प्रयोग किया जा रहा है।

आज गाँव के घर-घर में टीवी है और मोबाइल फोन भी आजकल हर आगमन तक सुलभ हो गया है। जिसके कारण अब गाँव और शहरी जीवन में कोई विशेष अंतर नहीं रह गया है। गाँवों का विकास भी होने लगा है। अब गाँव पहले जैसे शांत व सुरम्य गाँव न होकर चहल-पहल वाले छोटे-छोटे कस्बों में तब्दील होते जा रहे हैं। पहले गाँवों में भरे पूरे परिवार होते थे। आज एकल संस्कृति ने जन्म लिया है।

हालांकि अभी भी शहरी जीवन और गाँव के जीवन में कुछ अंतर है लेकिन पहले की अपेक्षा यह अंतर बहुत कम हुआ है।

2. लेखक ने इस कहानी के आरम्भ में दिखाया है कि भोलानाथ का ज्यादा से ज्यादा समय पिता के साथ बीतता है। कहानी का शीर्षक पहले तो पाठक को कुछ अटपटा-सा लगता है पर जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती है बात समझ में

आने लगती है। इस कहानी में माँ के आँचल की सार्थकता को समझाने का प्रयास किया गया है। भोलानाथ को माता व पिता दोनों से बहुत प्रेम मिला है। उसका दिन पिता की छत्रछाया में ही शुरू होता है। पिता उसकी हर क्रीड़ा में सदैव साथ रहते हैं, विपदा होने पर उसकी रक्षा करते हैं। परन्तु जब वह साँप से डरकर माता की गोद में आता है और माता की जो प्रतिक्रिया होती है, वैसी प्रतिक्रिया या उतनी तड़प एक पिता में नहीं हो सकती। माता उसके भय से भयभीत है, उसके दुःख से दुखी है, उसके आँसू से खिन्न है। वह अपने पुत्र की पीड़ा को देखकर अपनी सुधबुध खो देती है। वह बस इसी प्रयास में है कि वह अपने पुत्र की पीड़ा को समाप्त कर सके। माँ का यही प्रयास उसके बच्चे को आत्मीय सुख व प्रेम का अनुभव कराता है। उसके बाद तो बात शीशे की तरह साफ़ हो जाती है कि पाठ का शीर्षक 'माता का आँचल' क्यों उचित है। पूरे पाठ में माँ की ममता ही प्रधान दिखती है, इसलिए कहा जा सकता है कि पाठ का शीर्षक सर्वथा उचित है। इसका अन्य शीर्षक हो सकता है -- 'माँ की ममता'।

3. बच्चे को हृदयस्पर्शी स्नेह की पहचान होती है। बच्चे को विपदा के समय अत्याधिक ममता और स्नेह की आवश्यकता थी। भोलानाथ का अपने पिता से अपार स्नेह था पर जब उस पर विपदा आई तो उसे जो शांति व प्रेम की छाया अपनी माँ की गोद में जाकर मिली वह शायद उसे पिता से प्राप्त नहीं हो पाती। माँ के आँचल में बच्चा स्वयं को सुरक्षित महसूस करता है।
4. माँ को बाबूजी के खिलाने का ढंग पसंद इसलिए नहीं था क्योंकि वे चार दानों के कौर बालक भोलानाथ के मुँह में देते थे, इससे थोड़ा सा खा लेने पर बाबूजी समझते थे बालक ने बहुत खा लिया है। उसके विपरीत माँ मुँह भर कौर खिलाती थी। थाली में दही भात सानती थी और तरह-तरह पक्षियों के बनावटी

नामों के कौर खिलाती थी। तब कहीं जाकर माँ को बालक को खाना खिलाने की संतुष्टि का अहसास होता था।

5. मूसन तिवारी गाँव का ही एक बूढ़ा व्यक्ति था, जिसे कम दिखाई देता था। उसे बैजू ने चिढ़ाया था परंतु सभी बच्चों के साथ भोलानाथ ने भी बैजू के सुर में सुर मिलाकर मूसन को चिढ़ाना शुरू कर दिया। इस बात पर मूसन तिवारी बच्चों को मारने दौड़े पर बच्चे भाग गए। तब मूसन तिवारी ने बच्चों की शिकायत स्कूल में जाकर कर दी जिससे जैसे ही भोलानाथ घर पहुँचता है गुरुजी द्वारा भेजे गए बच्चों द्वारा पकड़ा जाता है और भोलानाथ को अपने इस व्यवहार के लिए सजा मिलती है।
6. बच्चे माता-पिता के प्रति अपने प्रेम की अभिव्यक्ति कई तरह से करते हैं -
 - माता-पिता के साथ विभिन्न प्रकार की बातें करके अपना प्यार व्यक्त करते हैं।
 - माता-पिता को कहानी सुनाने या कहीं घुमाने ले जाने की या अपने साथ खेलने को कहकर।
 - वे अपने माता-पिता से रो-धोकर या ज़िद करके कुछ माँगते हैं और मिल जाने पर उनको विभिन्न तरह से प्यार करते हैं।
 - माता-पिता के साथ नाना-प्रकार के खेल खेलकर।
 - माता-पिता की गोद में बैठकर या पीठ पर सवार होकर।
 - माता-पिता के साथ रहकर उनसे अपना प्यार व्यक्त करते हैं।
7. भोलानाथ भी बच्चे की स्वाभाविक आदत के अनुसार अपनी उम्र के बच्चों के साथ खेलने में रुचि लेता है। उसे अपनी मित्र मंडली के साथ तरह-तरह की क्रीड़ा करना अच्छा लगता है। वे उसके हर खेल व हुदगड़ के साथी हैं। अपने

मित्रों को मजा करते देख वह स्वयं को रोक नहीं पाता। इसलिए रोना भूलकर वह दुबारा अपनी मित्र मंडली में खेल का मजा उठाने लगता है। उसी मगनावस्था में वह सिसकना भी भूल जाता है।

पाठ 2 : जॉर्ज पंचम की नाक

1. सरकारी तंत्र में जॉर्ज पंचम की नाक लगाने को लेकर जो चिंता या बदहवासी दिखाई देती है, वह उनकी गुलाम और औपनिवेशिक मानसिकता को प्रकट करती है। सरकारी लोग उस जॉर्ज पंचम के नाम से चिंतित हैं जिसने न जाने कितने ही कहर ढहाए। उसके अत्याचारों को याद न कर उसके सम्मान में जुट जाते हैं। सरकारी तंत्र अपनी अयोग्यता, अदूरदर्शिता, मूर्खता और चाटुकारिता को दर्शाता है।
2. इंग्लैंड की महारानी एलिजाबेथ की आने की संकेत पाते ही नई दिल्ली की काया पलट होने लगा। और इसके लिए हर स्तर पर अनेक प्रयत्न किये गए होंगे, जैसे-
 - पूरे दिल्ली शहर में साफ सफाई के लिए विशेष योजनाएँ तैयार की गई होंगी।
 - इमारतों पर जमी धूल-मिट्टी साफ़ कर के उन्हें सजाया-सँवारा गया होगा।
 - रानी के आवागमन के रास्तों पर प्रकाश की व्यवस्था और सजावट की गयी होगी।
 - सड़कों के नाम की पट्टी लगाकर रेलिंग और क्रॉसिंग को रंगीन किया गया होगा।
 - स्थान-स्थान पर फ़ौजी टुकड़ियाँ तैनात की गयी होंगी।
 - जगह-जगह स्वागत द्वार बनाया गया होगा।
 - मार्ग पर दोनों देश के ध्वज लहराए गए होंगे।
 - राजपथ के दोनों ओर फूल-पौधे लगाए गए होंगे।

3. मूर्तिकार के द्वारा किए गए यत्न निम्नलिखित हैं-

- मूर्ति के पत्थर के प्रकार आदि का पता न चलने पर व्यक्तिगत रूप से नाक लगाने की जिम्मेदारी लेते हुए देश भर के पहाड़ों और पत्थर की खानों का तूफानी दौरा किया।
- उसने देश में लगे हर छोटे-बड़े नेताओं की मूर्ति की नाक से पंचम की लाट की नाक का मिलान किया ताकि उस मूर्ति से नाक निकालकर पंचम लाट पर नाक लगाई जा सके। परन्तु दुर्भाग्य से सभी की नाक जॉर्ज पंचम की नाक से बड़ी निकली।
- आखिर जब उसे नाक नहीं मिली तो हताश मूर्तिकार और चिन्तित एवम् आतंकित हुक्मरानों ने जिंदा इन्सान की नाक लगवाने का परामर्श दिया और प्रयत्न भी किया।

4. 'नाक' इज्जत-प्रतिष्ठा, मान-मर्यादा और सम्मान का प्रतीक है। शायद यही कारण है कि इससे संबंधित कई मुहावरे प्रचलित हैं जैसे- नाक कटना, नाक रखना, नाक का सवाल, नाक रगड़ना आदि। इस पाठ में नाक मान-सम्मान व प्रतिष्ठा का द्योतक है। यह बात लेखक ने विभिन्न बातों द्वारा व्यक्त की हैं। रानी एलिज़ाबेथ अपने पति के साथ भारत दौरे पर आ रही थीं। ऐसे मौके में जॉर्ज पंचम की नाक का न होना उसकी प्रतिष्ठा को धूमिल करने जैसा था। ये सभी सरकारी तंत्र विदेशियों की नाक को ऊँचा करने को अपने नाक का सवाल बना लेते हैं। यहाँ तक की जॉर्ज पंचम की नाक का सम्मान भारत के महान नेताओं एवम् साहसी बालकों के सम्मान से भी ऊँचा था। इस पाठ में सरकारी तंत्र की मानसिकता की स्पष्ट झलक भी दिखाई देती है।

5. इस कथन के माध्यम से लेखक ब्रिटिश सरकार का भारत में सम्मान को प्रदर्शित करता है। उसने इस कथन में ब्रिटिश सरकार पर व्यंग्य कसा है।

एलिजाबेथ एवम् प्रिंस फिलिप के आने पर चालीस करोड़ भारतीयों में से किसी की ज़िन्दा नाक काटकर जॉर्ज पंचम की लाट में लगा देने की अपमान जनक बात सोचना और करना। यदि सच में दिल्ली के पास नाक होती तो इतना बखेड़ा खड़ा न करके सीधे जॉर्ज पंचम के लाट को ही हटवा दिया होता।

6. दिल्ली की कायापलट होने लगी क्योंकि इंग्लैंड की महारानी एलिजाबेथ द्वितीय अपने पति के साथ हिन्दुस्तान पधारने वाली थी। और उन्हीं के स्वागत की तैयारी के रूप में दिल्ली की कायापलट होने लगी। सड़कें साफ की जाने लगी, इमारतों का श्रृंगार किया जाने लगा पूरा प्रशासन उनके स्वागत की तैयारी में जुट गया।
7. अखबार उस दिन चुप थे। ब्रिटिश सरकार को दिखाने के लिए किसी ज़िदा इन्सान की नाक जॉर्ज पंचम की लाट की नाक पर लगाना किसी को पसंद नहीं आया। यदि वे सच छाप देते तो पूरी दुनिया क्या कहती। दुनिया के लोग जब जानते कि आज़ादी के बाद भी दिल्ली में बैठे हुक्मरान आज भी अंग्रेजों के आगे अपनी दुम हिलाते हैं।

पाठ 3 : साना-साना हाथ जोड़ि

1. रात्रि के समय आसमान ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो सारे तारे बिखरकर नीचे टिमटिमा रहे थे। दूर ढलान लेती तराई पर सितारों के गुच्छे रोशनियों की एक झालर-सी बना रहे थे। रात के अन्धकार में सितारों से झिलमिलाता गंतोक लेखिका को जादुई एहसास करा रहा था। उसे यह जादू ऐसा सम्मोहित कर रहा था कि मानो उसका आस्तित्व स्थगित सा हो गया हो, सब कुछ अर्थहीन सा था। उसकी चेतना शून्यता को प्राप्त कर रही थी। वह सुख की अतीन्द्रियता में

इबी हुई उस जादुई उजाले में नहा रही थी जो उसे आत्मिक सुख प्रदान कर रही थी।

2. गंतोक को सुंदर बनाने के लिए वहाँ के निवासियों ने विपरीत परिस्थितियों में अत्यधिक श्रम किया है। पहाड़ी क्षेत्र के कारण पहाड़ों को काटकर रास्ता बनाना पड़ता है। पत्थरों पर बैठकर औरतें पत्थर तोड़ती हैं। उनके हाथों में कुदाल व हथौड़े होते हैं। कईयों की पीठ पर बँधी टोकरी में उनके बच्चे भी बँधे रहते हैं और वे काम करते रहते हैं। हरे-भरे बागानों में युवतियाँ बोकु पहने चाय की पत्तियाँ तोड़ती हैं। बच्चे भी अपनी माँ के साथ काम करते हैं। यहाँ जीवन बेहद कठिन है पर यहाँ के लोगों ने इन कठिनाईयों के बावजूद भी शहर के हर पल को खूबसूरत बना दिया है। इसलिए लेखिका ने इसे 'मेहनतकश बादशाहों का शहर' कहा है।

3. जितेन नार्गे ने लेखिका को सिक्किम की प्रकृति, वहाँ की भौगोलिक स्थिति एवं जनजीवन के बारे में निम्न जानकारियाँ दीं-

- नार्गे के अनुसार सिक्किम में घाटियाँ, सारे रास्ते हिमालय की गहनतम घाटियाँ और फूलों से लदी वादियाँ मिलेंगी।
- घाटियों का सौंदर्य देखते ही बनता है। नार्गे ने बताया कि वहाँ की खूबसूरती, स्विट्ज़रलैंड की खूबसूरती से तुलना की जा सकती है।
- नार्गे के अनुसार पहाड़ी रास्तों पर फहराई गई ध्वजा बुद्धिस्ट की मृत्यु व नए कार्य की शुरुआत पर फहराए जाते हैं। ध्वजा का रंग श्वेत व रंग-बिरंगा होता है।
- सिक्किम में भी भारत की ही तरह घूमते चक्र के रूप में आस्थाएँ, विश्वास, अंधविश्वास पाप-पुण्य की अवधारणाएँ व कल्पनाएँ एक जैसी थीं।

- वहाँ की युवतियाँ बोकु नाम का सिक्किम का परिधान डालती हैं। जिसमें उनके सौंदर्य की छटा निराली होती है। वहाँ के घर, घाटियों में ताश के घरों की तरह पेड़ के बीच छोटे-छोटे होते हैं।
- वहाँ के लोग मेहनतकश लोग हैं व जीवन काफी मुश्किलों भरा है।
- स्त्रियाँ व बच्चे सब काम करते हैं। स्त्रियाँ स्वेटर बुनती हैं, घर सँभालती हैं, खेती करती हैं, पत्थर तोड़-तोड़ कर सड़कें बनाती हैं। चाय की पत्तियाँ चुनने बाग में जाती हैं। बच्चों को अपनी कमर पर कपड़े में बाँधकर रखती हैं।
- बच्चों को बहुत ऊँचाई पर पढ़ाई वे लिए जाना पड़ता है क्योंकि दूर-दूर तक कोई स्कूल नहीं है। इन सब के विषय में नार्गे लेखिका को बताता चला गया।

4. इस यात्रा वृत्तांत में लेखिका ने हिमालय के पल-पल परिवर्तित होते रूप को देखा है। ज्यों-ज्यों ऊँचाई पर चढ़ते जाएँ हिमालय विशाल से विशालतर होता चला जाता है। हिमालय कहीं चटक हरे रंग का मोटा कालीन ओढ़े हुए, तो कहीं हल्का पीलापन लिए हुए प्रतीत होता है। चारों तरफ हिमालय की गहनतम वादियाँ और फूलों से लदी घाटियाँ थी। कहीं प्लास्टर उखड़ी दिवार की तरह पथरीला और देखते-ही-देखते सब कुछ समाप्त हो जाता है मानो किसी ने जादू की छड़ी घूमा दी हो। कभी बादलों की मोटी चादर के रूप में, सब कुछ बादलमय दिखाई देता है तो कभी कुछ और। कटाओ से आगे बढ़ने पर पूरी तरह बर्फ से ढके पहाड़ दिख रहे थे। चारों तरफ दूध की धार की तरह दिखने वाले जलप्रपात थे तो वहीं नीचे चाँदी की तरह कौंध मारती तिस्ता नदी। जिसने लेखिका के हृदय को आनन्द से भर दिया। स्वयं को इस पवित्र वातावरण में पाकर भावविभोर हो गई जिसने उनके हृदय को काव्यमय बना दिया।

5. पत्थरों पर बैठकर श्रमिक महिलाएँ पत्थर तोड़ती हैं। उनके हाथों में कुदाल व हथौड़े होते हैं। कड़ियों की पीठ पर बँधी टोकरी में उनके बच्चे भी बँधे रहते हैं

और वे काम करते रहते हैं। हरे-भरे बागानों में युवतियाँ बोकु पहने चाय की पत्तियाँ तोड़ती हैं। बच्चे भी अपनी माँ के साथ काम करते हैं। इन्हीं की भाँति आम जनता भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयास में जीविका रूप में देश और समाज के लिए बहुत कुछ करते हैं। सड़कें, पहाड़ी मार्ग, नदियों, पुल आदि बनाना। खेतों में अन्न उपजाना, कपड़ा बुनना, खानों, कारखानों में कार्य करके अपनी सेवाओं से राष्ट्र आर्थिक सद्दृढ़ता प्रदान करके उसकी रीढ़ की हड्डी को मजबूत बनाते हैं। हमारे देश की आम जनता जितना श्रम करती है, उसे उसका आधा भी प्राप्त नहीं होता परन्तु फिर भी वो असाध्य कार्य को अपना कर्तव्य समझ कर करते हैं। वो समाज का कल्याण करते हैं परन्तु बदले में उन्हें स्वयं नाममात्र का ही अंश प्राप्त होता है। देश की प्रगति का आधार यहीं आम जनता है जिसके प्रति सकारात्मक आत्मीय भावना भी नहीं होती। यदि ये आम जनता ना हो तो देश की प्रगति का पहिया रुक जाएगा।

6. 'कटाओ' पर किसी भी दुकान का न होना उसके लिए वरदान है क्योंकि अभी यह पर्यटक स्थल नहीं बना। यदि कोई दुकान होती तो वहाँ सैलानियों का अधिक आगमन शुरू हो जाएगा। और वे जमा होकर खाते-पीते, गंदगी फैलाते, इससे गंदगी तथा वहाँ पर वाहनों के अधिक प्रयोग से वायु में प्रदूषण बढ़ जाएगा। लेखिका को केवल यही स्थान मिला जहाँ पर वह स्नोफॉल देख पाई। इसका कारण यही था कि वहाँ प्रदूषण नहीं था। अतः 'कटाओ' पर किसी भी दुकान का न होना उसके लिए एक प्रकार से वरदान ही है।

7. 'साना साना हाथ जोड़ि' पाठ में देश की सीमा पर तैनात फौजियों की चर्चा की गई है। वस्तुतः सैनिक अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह ईमानदारी, समर्पण तथा अनुशासन से करते हैं। सैनिक देश की सीमाओं की रक्षा के लिए कटिबद्ध रहते हैं। देश की सीमा पर बैठे फ़ौजी प्रकृति के प्रकोप को सहन करते हैं। हमारे

सैनिकों (फौजी) भाईयों को उन बर्फ से भरी ठंड में ठिठुरना पड़ता है। जहाँ पर तापमान शून्य से भी नीचे गिर जाता है। वहाँ नसों में खून को जमा देने वाली ठंड होती है। वह वहाँ सीमा की रक्षा के लिए तैनात रहते हैं और हम आराम से अपने घरों पर बैठे रहते हैं। ये जवान हर पल कठिनाइयों से जूझते हैं और अपनी जान हथेली पर रखकर जीते हैं। हमें सदा उनकी सलामती की दुआ करनी चाहिए। उनके परिवारवालों के साथ हमेशा सहानुभूति, प्यार व सम्मान के साथ पेश आना चाहिए।

इन सैनिकों के जीवन से हमें अटूट देशप्रेम, त्याग, निष्ठा, समर्पण आदि मूल्यों को जीवन में अपनाना चाहिए।

8. सिक्किम यात्रा के दौरान लेखिका ने पहाड़ी औरतों को देखा जो मार्ग बनाने के लिए पत्थरों पर बैठकर पत्थर तोड़ रही थीं। वे पत्थर तोड़कर सँकरे रास्तों को चौड़ा कर रही थीं। उनके कोमल हाथों में कुदाल व हथौड़े से ठाठे (निशान) पड़ गए थे। कईयों की पीठ पर बच्चे भी बँधे हुए थे। इनको देखकर लेखिका को बहुत दुख हुआ। वह सोचने लगी कि यह पहाड़ी औरतें अपने जान की परवाह न करते हुए सैलानियों के भ्रमण तथा मनोरंजन के लिए हिमालय की इन दुर्गम घाटियों में मार्ग बनाने का कार्य कर रही हैं। सात आठ साल के बच्चों को रोज़ तीन-साढ़े तीन किलोमीटर का सफ़र तय कर स्कूल पढ़ने जाना पड़ता है। यह देखकर लेखिका मन में सोचने लगी कि यहाँ के अलौकिक सौंदर्य के बीच भूख, मौत, दैन्य और जिजीविषा के बीच जंग जारी है।

9. नार्गे एक कुशल गाइड था। वह अपने पेशे के प्रति पूरा समर्पित था। उसे सिक्किम के हर कोने के विषय में भरपूर जानकारी प्राप्त थी। लेखिका को वह सिक्किम के प्रत्येक क्षेत्र की छोटी-से छोटी जानकारी दे रहा था। जितने नार्गे सिक्किम की प्रकृति और संस्कृति का अच्छा जानकार होने के कारण व न

केवल लेखिका की रूचि बनाए रख रहा था बल्कि लेखिका की हर संभव जिज्ञासा का उत्तर भी दे रहा था।

10. प्रकृति ने जल संचय की व्यवस्था नायाब ढंग से की है। प्रकृति सर्दियों में बर्फ के रूप में जल संग्रह कर लेती है और गर्मियों में पानी के लिए जब त्राहि-त्राहि मचती है, तो उस समय यही बर्फ शिलाएँ पिघलकर जलधारा बन के नदियों को भर देती है। नदियों के रूप में बहती यह जलधारा अपने किनारे बसे नगर तथा गावों में जल-संसाधन के रूप में तथा नहरों के द्वारा एक विस्तृत क्षेत्र में सिंचाई करती हैं और अंत में सागर में जाकर मिल जाती हैं। सागर से फिर से वाष्प के रूप में जल-चक्र की शुरुआत होती है। सचमुच प्रकृति ने जल संचय की कितनी अद्भुत व्यवस्था की है।